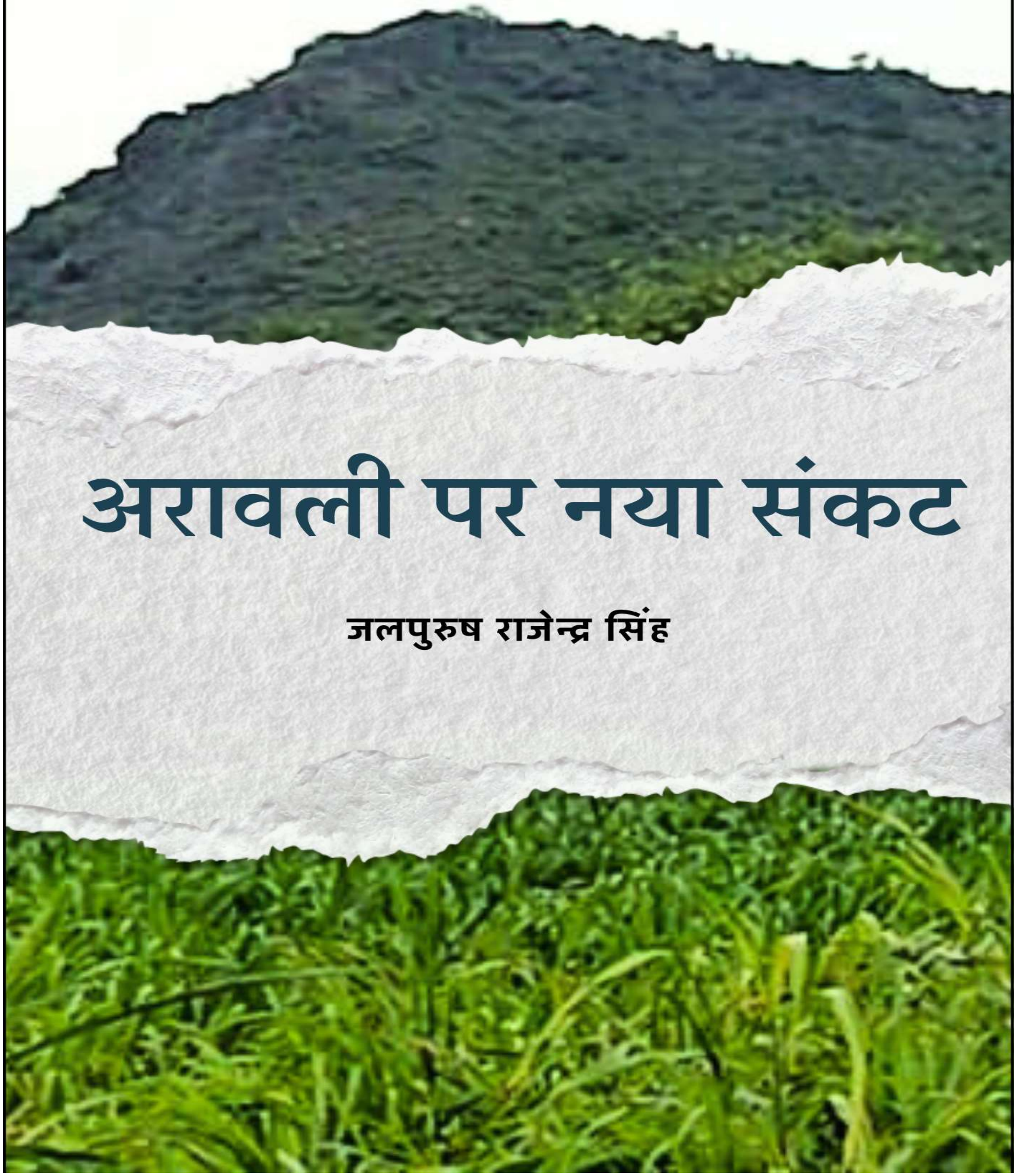
क्या अरावली जैसी है, वैसी बनी रहेगी ?
क्या भारत की संस्कृति-प्रकृति बची रहेगी ?

अरावली पर नया संकट

जलपुरुष राजेन्द्र सिंह



पाठ्यक्रम

1. प्रस्तावना

वर्ष 1990 के आरंभ में अरावली पर्वतमाला को बचाने की ऐतिहासिक शुरुआत केस नं. 509/9 याचिका उच्चतम न्यायालय में तरुण भारत संघ बनाम भारत सरकार से हुई थी। इसी केस में मिली जीत से माननीय उच्चतम न्यायालय के आदेश के प्रकाश में अधिसूचना संख्याः एसओ 319(ई), दिनांक 7 मई, 1992 हुई। सरिस्का से अलवर, गुड़गांव और आगे चलकर संपूर्ण अरावली क्षेत्र के लोग एकजुट होकर खड़े हुए। वर्ष 1993 के बाद भारत के उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में याचिकाएँ दायर कर लोग खनन रूकवाने में सफल होते गए और कई महत्वपूर्ण जीतें हासिल हुईं। परिणामस्वरूप अरावली का संरक्षण प्रारंभ हुआ और "हरित अरावली" जैसी परियोजनाओं की नींव भी राजस्थान से ही पड़ी।

अब 20 नवंबर 2025 को ऐसा क्या हुआ? भारत सरकार और राजस्थान सरकार का वही वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, जो वन और पर्वतों की रक्षा के लिए गठित हुआ था, खनन को बढ़ावा देने के लिए आगे आ खड़ा हुआ है? जो सरकार का पर्यावरण विभाग प्रकृति की रक्षक होनी चाहिए थी, वही अब पहाड़ों के विनाश का कारण बन रही है। जब "बाढ़ ही खेत खाने लगे", तब यह केवल चेतावनी नहीं बल्कि प्रलय का संकेत होता है।

वर्ष 1990 में अलवर के जागरूक लोगों और तरुण भारत संघ ने अरावली बचाने की मुहिम–जुम्बिस को एक जनआंदोलन का रूप दिया। उस संघर्ष के परिणामस्वरूप अरावली पुनर्जीवित होने लगी थी। किंतु अब 2025 में ऐसा क्या बदल गया कि कुछ चंद लोगों के स्वार्थ के कारण अरावली के विनाश का मार्ग फिर खोल दिया गया? माननीय उच्चतम न्यायालय के सम्मानीय न्यायधीश ने अपनी रिटायरमेंट के दो दिन पूर्व पूरी अरावली के सत्यानाश कराने का आदेश दे दिया।

अलवर का इतिहास विशेष है, यहीं से अरावली के संरक्षण और दुर्भाग्यवश उसके विनाश दोनों की शुरुआत हुई। आज एक बार फिर पूरी अरावली के लोग उसके संरक्षण के लिए खड़े हो रहे हैं। "अरावली विरासत जन अभियान" धीरे–धीरे एक व्यापक "अरावली बचाओ आंदोलन" का रूप ले रहा है। यह एक आशा की किरण है। संतोष का विषय यह भी है कि विभिन्न राजनीतिक दलों के नेता दलगत राजनीति से ऊपर उठकर अरावली को बचाने के प्रयासों में जुटने लगे हैं।

अब अरावली क्षेत्र के समस्त समाज को अपनी समझ और सामर्थ्य के अनुसार संगठित प्रयास प्रारंभ करने होंगे। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी जगह रहते हुए सामाजिक माध्यमों और मीडिया का सकारात्मक उपयोग करना होगा। परंतु यह स्मरण रहे कि हम अरावली को बचाने के लिए खड़े हुए हैं, क्योंकि हम अरावली के बेटे–बेटियाँ हैं। अरावली की सनातनता एक है, उसे बचाना ही हमारा एकमात्र उद्देश्य है।

यह पुस्तक अरावली को जानने, उसके दर्द को समझने और उस दर्द को बढ़ाने वालों की पहचान कर उन्हें भी समझाने का एक प्रयास है। "अरावली बचेगी तो आप भी बचोगे", लाभ के लालच में अपनी माँ अरावली को मत बेचिए। अरावली की बलि चढ़ाना केवल संसाधनों का नाश नहीं है, बल्कि अपनी विरासत, जीवन, स्वास्थ्य और भविष्य को दांव पर लगाने जैसा है। यह उस मुर्गी को मारने जैसा नहीं है जो सोने का अंडा देती है, बल्कि उस माँ की हत्या जैसा जघन्य अपराध है जिसने हमें जन्म दिया और पाला–पोसा है।

अरावली पर्वतमाला भारत की रीढ़ है। यहीं बंगाल की खाड़ी और अरब सागर से आने वाले बादल मिलकर वर्षा करते हैं। खनन इन बादलों के मार्ग को बाधित करता है। अरावली की प्रकृति, संस्कृति खेती, वनौषधियों, वन्यजीवों और आदिवासी समुदायों को संरक्षण देती है। यहां की आदिपरंपराएँ और आस्थाएँ भारतीय पर्यावरण संरक्षण की आधारशिला रही हैं, इस पुस्तक में उनका दस्तावेजीकरण किया गया है।

यह पुस्तक अरावली को ऊँच–नीच में बाँटने वालों की सच्चाई उजागर करती है। यह भी स्पष्ट करती है कि उच्चतम न्यायालय ने अरावली को क्यों और कैसे विभाजित किया। साथ ही, यह भी बताती है कि वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने अपने ही 7 मई 1992 के अरावली संरक्षण कानून के विरुद्ध 20 नंवम्बर वाला कदम क्यों और कैसे उठवाया है। उच्चतम न्यायालय का निर्णय तो पर्यावरण मंत्रालय के ऐफीडेविट से मिला है।

यह पुस्तक हमें यह समझने का मार्ग दिखाती है कि अरावली को बचाने के लिए हमें क्यों और कैसे खड़ा होना चाहिए। अरावली की सच्चाई के माध्यम से यह पूरे भारत में वन, पर्वत, पर्यावरण और भारतीय आस्था के महत्व बताती है। यह केवल अरावली की कहानी नहीं है, बल्कि पूरे भारत के प्रकृति और संस्कृति प्रेमियों को जाग्रत करने वाला एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

2. 100 मीटर का विवादः अरावली संरक्षण का नया संकट

1980 के दशक तक अरावली क्षेत्र में वैध और अवैध मिलाकर लगभग 28,000 खदानें संचालित हो रही थीं। इन खदानों को बंद कराने का बीड़ा 1988 में तरुण भारत संघ ने उठाया। 1993 तक लंबी और कठिन लड़ाई के बाद अरावली लगभग खनन–मुक्त हो गई। यह केवल कानूनी कार्यवाही नहीं थी, बल्कि अरावली की आत्मा और सांस्कृतिक विरासत को बचाने का प्रयास था।

इस मुहिम की शुरुआत 1990 के विजयदशमी पर सरिस्का में खनन रोकने से हुई। फिर 2 अक्टूबर 1993 को हिम्मतनगर (गुजरात) से निकली अरावली चेतना यात्रा ने खनन विरोध का संदेश दिल्ली तक पहुँचाया। 22 नवंबर 1993 को यह संदेश संसद तक गया और उस दिन ऐसा प्रतीत हुआ कि अरावली ने एक बार फिर जीवन लिया।

1994 में सभी जिलों में अरावली संरक्षण समितियां बनाई गईं और जिला प्रशासन को खनन रोकने की जिम्मेदारी सौंपी गई। सर्वोच्च न्यायालय को नियमित रिपोर्ट भेजने का तंत्र भी स्थापित किया गया। उस समय लगता था कि अरावली सुरक्षित है और आगे के लिए स्थायी व्यवस्था बन गई है। 1996 आते–आते मैं निश्चिंत हो गया और मान लिया कि मेरा संकल्प पूरा हुआ।

लेकिन केवल दस–पंद्रह वर्षों के भीतर स्थिति बदल गई। खनन संगठन और लॉबी अधिक ताकत और संसाधन जुटाकर सक्रिय हो गई। सरकारों और खनन उद्योगपतियों के गठजोड़ को सर्वोच्च न्यायालय की मोहर भी मिल गई। खनन फिर से खुलवाने की कोशिशें तेज हो गईं। उसी समय कई युवा, जैसे ख्याली मीणा, अरावली बचाने के लिए आगे आए। पूरी अरावली में लोग स्वयं सामने आकर संरक्षण में जुट गए। मन को संतोष हुआ, लेकिन मुझे यह पता नहीं था कि वैध और अवैध खनन फिर मेरी आंखों के सामने शुरू होगा।

जब मैंने सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय पढ़ा, तब तक सरकारी एफिडेविट और मंत्रालय की कार्रवाई नहीं देखी थी। प्रारंभ में लगा कि न्यायालय ने चारों राज्यों की अरावली के लिए समान कानून व्यवस्था बनाने के उद्देश्य से 100 मीटर ऊँचाई की परिभाषा तय की है। जैसे किसी गणना में आधार बिंदु निर्धारित किया जाता है, शायद इसे भी वही दृष्टि से अपनाया गया था।

लेकिन वन सर्वेक्षण संस्थान, भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण (GSI) और तकनीकी उपसमिति (TSC) की रिपोर्टें पढ़कर आंखें खुल गईं। यह स्पष्ट हुआ कि यह परिभाषा खनन उद्योग के सतत विकास के नाम पर हमारी प्राचीनतम विरासत के लिए नया संकट पैदा कर रही है।

अरावली का वास्तविक भू–परिदृश्य यह दर्शाता है कि 20 मीटर तक क्षेत्रफल 1,07,494 वर्ग किमी, 20–40 मीटर 12,081 वर्ग किमी, 40–60 मीटर 5,009 वर्ग किमी, 60–80 मीटर 2,656 वर्ग किमी, 80–100 मीटर 1,594 वर्ग किमी और 100 मीटर से ऊपर केवल 1,048 वर्ग किमी है, यानी पूरा क्षेत्रफल का केवल 8.7 प्रतिशत। यदि केवल 100 मीटर से ऊपर को संरक्षण का क्षेत्र माना गया, तो अधिकांश अरावली बचाव से बाहर रह जाएगी।

आदिवासी और स्थानीय समुदाय, जिनके घर, खेत, वाड़े और सांस्कृतिक स्थल अधिकांशतः 100 मीटर से नीचे हैं, वहां से विस्थापित नहीं होना चाहते। उनका जीवन और संस्कृति प्रकृति से जुड़े हैं। खनन की बीमारियों से बचकर दूर रहना उनकी आदत और उनका अधिकार है। अरावली की अपनी प्रकृति और संस्कृति दुनिया में सर्वोपरि है, और खनन उद्योग इसके विरुद्ध कार्य कर रहा है। यही कारण था कि 45 वर्ष पहले जयपुर से अरावली बचाने का काम शुरू हुआ।

पर विडंबना यह है कि उसी क्षेत्र से खनन लॉबी की पहल को न्यायालय ने मान्यता दे दी। संरक्षणकर्ताओं की आवाज़ को अनसुना कर दिया गया। अरावली को बचाने वालों से कभी कोई सरकारी रिपोर्ट तैयार करने वाला नहीं मिला, जबकि अधिकांश संरक्षणकर्ता जयपुर और अलवर में रहते हैं। मुझसे भी किसी अधिकारी ने संवाद नहीं किया। यदि संवाद होता तो मैं वास्तविक जानकारी और सर्वमान्य तथ्य दे सकता था। 100 मीटर ऊंचाई वाली परिभाषा केवल खनन उद्योग की बनाई परिभाषा है और भूवैज्ञानिक, पर्यावरणविद्, प्रकृति या संस्कृति विशेषज्ञ इसे स्वीकार नहीं करते।

भारत सरकार और चारों राज्यों (गुजरात, राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली) को अरावली की परिभाषा पर पुनर्विचार करना चाहिए। अन्यथा यह सरकारों की बड़ी बदनामी का कारण बनेगी। परिभाषा विवाद को सर्वोच्च न्यायालय पर डालना सही नहीं है। न्यायपालिका हमारे लोकतंत्र का सर्वोपरि अंग है, सरकार से भी ऊपर, पर हाल के फैसले ज्यादातर एकतरफा समझौते जैसा प्रतीत होते हैं। 100 मीटर परिभाषा वाला समझौता अरावली का न्याय नहीं करता और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि इस निर्णय में अरावली पर्वतमाला के पक्ष को ठीक स्थान नहीं मिला। भारत की संस्कृति और प्रकृति के अनुरूप अरावली पर्वतमाला को न्याय नहीं मिला।

हम सम्माननीय सर्वोच्च न्यायालय से प्रार्थना करते हैं कि वे इस निर्णय पर पुनर्विचार करें। अरावली भारत की प्राचीनतम विरासत है। इसे भारतीय संस्कृति और प्रकृति योग का उच्चतम उदाहरण मानकर अपने निर्णय पर पुनर्विचार करें। वही से भारतीय विरासत के अरावली को बचाने की वास्तविक पहल होगी।

3. अरावली संरक्षण और भारत का न्यायिक निर्णय

अरावली संरक्षण को लेकर सर्वोच्च न्यायालय ने 20 नवंबर 2025 को एक महत्वपूर्ण निर्देश दिया, जिसमें पर्यावरण क्षरण को "राष्ट्रीय प्राथमिकता का प्रश्न" बताया गया। अदालत ने कहा कि वर्तमान तंत्र बिखरा हुआ है और विभिन्न राज्यों में नीतिगत असमानताएँ अरावली के संरक्षण को कमजोर कर देती हैं। इसी संदर्भ में पीठ ने अपने आदेश में स्पष्ट निर्देश दिया "20 नवंबर 2025 को अपने आदेश में, हम पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय को निर्देश देते हैं कि वह भारतीय वन प्रबंधन एवं अनुसंधान परिषद के माध्यम से संपूर्ण अरावली क्षेत्र जिसे गुजरात से दिल्ली तक फैली सतत भूवैज्ञानिक पर्वतमाला के रूप में समझा जाता है कि, इसके लिए सरंडा की तर्ज पर एक मास्टर प्लान फॉर सस्टेनेबल मैनेजमेंट (MPSM) तैयार करे।" अदालत ने इस मास्टर प्लान को समयबद्ध रूप से लागू करने और सभी राज्यों के बीच समन्वित ढांचा विकसित करने को अनिवार्य बताया, ताकि अरावली के संरक्षण और पुनर्जीवन के लिए एकीकृत नीति सुनिश्चित की जा सके। उच्चतम न्यायालय ने भारत सरकार को निर्देश दिया है। अरावरी संपूर्ण रूप में गुजरात से दिल्ली तक एक पर्वतमाला है। यह सम्पूर्ण संरक्षित एक ही पर्वतमाला है। इसे समग्रता में देखना है।

पूरी दुनिया और उच्चतम न्यायालय का मानना है कि पर्वतमालाएँ धरती के गर्भ से निकलती हैं। इनकी सम्पूर्ण पर्वतमाला की पारिस्थितिकी एक समान रूप में बचानी होती है। संपूर्ण भूभाग, चाहे धरती के भीतर हो या बाहर, एक जैसा संरक्षण मांगता है। इसीलिए उच्चतम न्यायालय ने अरावली के हर हिस्से को उसकी सीमाओं में खनन नहीं करने के लिए व्यवस्था बनाने का 6 माह का समय दिया है। अरावली को खनन–मुक्त रखना ही भारत की विरासत बचाना ज्यादा महत्वपूर्ण है। अरावली में कई अच्छे और महत्वपूर्ण खनिज हैं; जिन खनिजों की देश को राष्ट्रीय सुरक्षा हेतु आवश्यकता है। एटॉमिक राष्ट्रीय सुरक्षा महत्व हेतु खनन की उनको सुप्रीम कोर्ट ने छूट दी है लेकिन सामान्य खनिजों के लिए अरावली को काटना, जंगल नष्ट करना और पर्वतमाला में नए घाव बनाना किसी भी रूप में उचित नहीं है। कोप 30 बेलेम, ब्राजील ने भी वर्षा वन के संरक्षण एवं वनवासियों के निर्णय में भागीदार बनाने की व्यवस्था आज के ही दिन बनाई है।

20 नवंबर 2025 को ब्राजील में कोप 30 आयोजित हुआ, जिसमें दुनिया के प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति भविष्य की चिंता में एकत्र हुए। इस बार ब्राजील के राष्ट्रपति ने स्वयं कहा कि उनके देश के अमेजोन वर्षा वन का बड़ा नुकसान खनन से हुआ है। इस नुकसान के प्रमाण दुनिया को दिखाने के लिए कोप को अमेजन फॉरेस्ट के केंद्र बेलम में आयोजित किया गया है। इस बार का कोप एक बहुत बड़ा प्रुफ है।

कोप 30 ने निर्णय लिया कि सारा पैसा सीधे आदिवासी संगठनों को दिया जाएगा, कोई सरकार बीच में नहीं रहेगी। आदिवासी स्वयं जंगल बचाने के निर्णय करेंगे। जर्मनी ने ब्राजील के नए वैश्विक वर्षावन कोष में दस

वर्षों में एक अरब यूरो देने का वादा किया है। यह कोष उपग्रह निगरानी के आधार पर वनों को बचाने वालों को पुरस्कार और अधिक कटाई करने वालों पर दंड का प्रावधान करता है। जर्मनी के मंत्रियों ने इसे धरती के "फेफड़ों" उष्णकटिबंधीय वर्षावनों की रक्षा का सवाल बताया है।

ब्राजील का अनुमान है कि यह कोष आगे चलकर 125 अरब डॉलर तक पहुंच सकता है। वर्षावन, जिन्हें धरती के "हरे फेफड़े" कहा जाता है, खेती और खनन के दबाव से संकट में हैं। नॉर्वे तीन अरब डॉलर और ब्राजील व इंडोनेशिया एक–एक अरब डॉलर देने का वादा कर चुके हैं। इस पहल में कई वर्षावन देश शामिल हैं और इसकी देखरेख एक संयुक्त समिति करेगी। लगभग सत्तर देशों को इससे लाभ मिल सकता है, बशर्ते कम से कम 20 प्रतिशत धन आदिवासी और पारंपरिक समुदायों तक पहुंचे। अब तक 53 देश इसका समर्थन कर चुके हैं, और ब्राजील को उम्मीद है कि समृद्ध देश 25 अरब डॉलर की शुरुआती सहायता देंगे। फोजिल–फयूल शब्द विवाद को लेकर कोप का समय बढ़ गया है।

पर्यावरण और भविष्य की चिंता करने वाले मित्रों ने उच्चतम न्यायालय और विभिन्न राज्यों के उच्च न्यायालयों में अरावली को बचाने की आवाजें उठाईं। इन याचिकाओं के परिणामस्वरूप चारों राज्यों की अरावली का एक समग्र दर्शन सामने आया, जिससे हम बहुत आनंदित थे। उच्चतम न्यायालय ने कहा कि अब आगे कोई नई खनन लीज नहीं दी जाएगी। यह बेहद सम्माननीय फैसले है। जिनसे अरावली के कुछ आंसू पोंछने की कोशिश हुई। लेकिन अब नई परिभाषा से भारत सरकार अरावली के आंसू के पोछनें की शुरुआत करेगी।यह अरावली के आंसू सदैव के लिए रोकेंगे ऐसा विश्वास है।

उच्चतम न्यायालय ने कहा कि सौ मीटर ऊंची अरावली में खनन नहीं होगा और सौ मीटर से नीचे की अरावली पर भारत सरकार विचार कर सकती हैं। यह फैसला 1990 की याद दिलाता है, जब अरावली में वैध और अवैध 28 हजार से अधिक खदानें चलती थीं। इन खदानों को बंद कराने के लिए तरुण भारत संघ की पहल और उसके आधार पर जारी नोटिफिकेशन को लागू करवाने के लिए मैंने 2 अक्टूबर 1993 को हिम्मतनगर गुजरात से दिल्ली तक पदयात्रा की थी। भारत सरकार ने इस आवाज को गंभीरता से सुना, खदानें बंद हुईं और अरावली पुनर्जीवित होने लगी। लेकिन वर्ष 2015 आते–आते बहुत सी जगहों पर अवैध खदानें फिर चालू हो गईं। जहां खदानें चलीं, वहां अरावली नष्ट होने लगी, जल संकट और जलवायु संकट गहराने लगे, भूजल भंडार खाली होते गए। फरीदाबाद, नूहं, गुरुग्राम इसके उदाहरण हैं। अलग–अलग समय पर वैध–अवैध सभी तरह की खदानें धीरे–धीरे फिर चलने लगीं और संकट खड़ा करती रहीं। राजस्थान में अनिल मेहता तथा अन्य लोगों ने याचिका दायर करके रूकवाने की लड़ाई जारी कर दी। हरियाणा–दिल्ली में नीलम अहुवालिया ने लड़ाई खड़ी करी है, जो अब भी जारी है।

सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि, एटमिक मिनरल्स जैसे अत्यावश्यक खनिज अरावली में मिलेंगे तो निकाले जा सकते हैं, और यह स्वागत योग्य बात है। लेकिन सामान्य खनिजों के लिए माइनिंग करके अरावली को नंगा करना, जंगल काटना और उसमें गैप बनाना बिल्कुल उचित नहीं है। अरावली की परिभाषा अब समग्र है। कहना कि सौ मीटर ऊंची ही अरावली होती है, गलत है। पर्वतमाला एक ही होती है। मां के गर्भ से निकले पर्वत को गर्भ से लेकर चोटी तक उसके पूरे चरित्र सहित बचाना जरूरी है, उसके पेड़–पौधे, जीव–जंतु और उसके आदिवासी ,जंगलवासी समुदाय। सबसे पुराने आदिवासी समुदाय अरावली की चोटियों पर ही मिलते हैं। इनको बचाने के लिए कोप 30 से सीख लेना चाहिए।

तरुण भारत संघ ने अरावली को बचाने की आवाज सबसे पहले 1988 में उठाई थी। 1991 में अरावली में हो रहे खनन के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में जनहित याचिका दायर की थी। उस जमाने में उच्चतम न्यायालय में इस केस की सुनवाई पूर्व न्यायमूर्ति श्री वेंकट चलैया, पूर्व मुख्य न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय भारत, ने बहुत ही गंभीरता से ली थी। उन्होंने सरिस्का की 478 खदानों को बंद करने का आदेश दिया था। पूरी अरावली पर्वतमाला, जो भारत की सबसे प्राचीन पर्वतमाला और दुनिया की दूसरी सबसे प्राचीन पर्वतमालाओं में मानी जाती है, जैसी महत्वपूर्ण प्राकृतिक विरासत को बचाने के लिए भारत सरकार ने अरावली की आवाज सुनी और उसके आँसू पोंछने की शुरुआत 7 मई 1992 को हुई।

धीरे–धीरे यह मांग अरावली के चारों राज्यों, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान और गुजरात में फैल गई। 2 अक्टूबर 1993 को हिम्मतनगर, गुजरात से अरावली का सिंहनाद करते हुए यह यात्रा 22 नवम्बर को दिल्ली संसद पहुंची थी। उस समय के संसद अध्यक्ष शिवराज पाटिल को अरावली को बचाने के लिए ज्ञापन दिया गया और बताया गया कि भारत सरकार ने अरावली के लिए नोटिफिकेशन तो किया है, लेकिन अभी भी अवैध खदानें चल रही हैं। इन अवैध खदानों को बंद कराया जाना जरूरी है। पाटिल साहब ने कहा कि सरकार कोशिश कर रही है, लेकिन अलग–अलग राज्यों में अलग–अलग सरकारें होने से कुछ सरकारें खान मालिकों को संरक्षण दे रही हैं, जिससे मुश्किलें खड़ी हो रही हैं। फिर भी, खदानों को बंद कराकर दुनिया की प्राचीनतम पर्वतमाला अरावली को बचाने का प्रयास अवश्य किया जाएगा। उस समय अरावली ने अपने सिंहनाद से अपने को बचाने की एक प्रक्रिया शुरू करवाई थी। संसद सड़क दोनों स्थानों पर यह काम माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के प्रकाश में किया गया था।

20 नवंबर 2025 को सम्माननीय उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की संपूर्ण पीठ ने जो निर्णय दिया है, उससे अरावली के आंसू दोबारा पोछनें का काम सम्मानीय उच्चतम न्यायालय ने भारत सरकार को दे दिया है। इन आंसुओं को रोकने का काम भारत सरकार के पर्यावरण मंत्रालय को करना है। हम उम्मीद करते हैं

कि भारत सरकार का जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण मंत्रालय अरावली की पुकार सुनेगा और उसके आँसू पोंछेगा।

अरावली के बारे में चारों राज्यों में अलग–अलग परिभाषाएं दी जा रही थीं। इस चिंता को देखते हुए ही उच्चतम न्यायालय ने एक समग्र पर्वतमाला की एकीकृत परिभाषा बनाने की कोशिश की है। उन्होंने प्रयास किया कि अरावली को राज्यों की सीमाओं में बंटाकर नहीं देखे। इस प्रयास से यह अच्छी बात हुई कि अरावली को एक पर्वतमाला मानकर उसके लिए एक समान परिभाषा का विचार आगे बढ़ा।

बड़े–छोटे का अंतर 100 मीटर उंचाई में खनन नहीं, नीची पहाडियों में विचार किया जा सकता है। इस गली से खनन उद्योगपति माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय को तोड़–मरोड़कर उपयोग नही कर सके इस हेतु भारत सरकार चारों राज्य सरकारें और अरावली के समाज को खड़ा होना जरूरी है। खासकर भारत का जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण मंत्रालय अपनी भूमिका उच्चतम न्यायालय के प्रकाश में लागू करायेगा।

अरावली विखंडित नहीं है। अरावली धरती मां के गर्भ से निकली एक समग्र पर्वतमाला है। मां के गर्भ से निकली इकाई एक होती है; उसे बड़ा–छोटा कहकर अलग–अलग परिभाषित नहीं किया जा सकता। एक इकाई के सभी अंगों का समान रूप से पोषण एवं व्यवहार होता है। जैसा उच्चतम न्यायालय ने कहा वैसा ही सरकार और खनन उद्योग में लगे उद्योगपति इस समझकर दुनिया की प्राचीनतम अरावली पर्वतमाला को सभी मिलकर बचायेंगे।

4. पुनर्जीवित अरावली अब पुनः विनाश की दिशा में है

अरावली बचाओ आंदोलन ने देश को पानीदार बनाने की प्रक्रिया शुरू की थी। 80 के दशक में जब पूरा अरावली खनन के दबाव में पिस रहा था, तब पश्चिम की हवा के साथ अरावली के 12 गैप में से रेत दिल्ली की तरफ बढ़ रही थी। 10 साल के बाद जब 1991 में अरावली की खदानें बंद हुईं, तो अरावली पुनर्जीवित होना शुरू हुई। खदाने बंद होने से जो लोग बेरोजगार हुए थे, वे सब जल संरक्षण के काम में जुट गए।

राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली और गुजरात में समुदायों ने मिलकर पानी बचाने का काम शुरू किया, इसके परिणामस्वरूप अरावली में हरियाली बढ़ने लगी थी। खनन बंद होने के बाद खदानें पानी के बैंक जैसी बन गईं।

वर्ष 2014 के बाद फिर से अरावली में अवैध खनन का काम तेजी से आगे बढ़ा। इस खनन ने अरावली को फिर से नंगा करना शुरू किया है। जिसके कारण फरीदाबाद का पूरा इलाका जो 1980–90 में खदानें बंद होने के कारण हरा–भरा होने लगा था, वे पहाड़ियां अब नंगी हो गई हैं। इससे राजस्थान की तरफ से आने वाली गर्म हवाएं, अब दिल्ली की तरफ तेजी से बढ़ने लगी हैं। इन हालातों को देखते हुए ऐसा लगता है कि अब अरावली फिर अपने पश्चिम की रेत को पूरब की तरफ लाने में मदद करेगी। दिल्ली के फेफड़ों का काम अरावली के जंगल करते थे, वह फेफड़े अब बेकार होकर, अरावली व दिल्ली को बीमार करेंगे।

हमें यह समझने की जरूरत है कि, जिस प्रकार 1991 के बाद अरावली में खदानों को बंद होने से, अरावली पुनर्जीवित हुई और अरावली में जल संरक्षण का काम तेज हुआ था, वैसे ही अब दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान और गुजरात के लोगों को भी एक बार फिर करने व आवाज उठने की जरूरत है। उस जमाने में भारत की संसद के लोकसभा अध्यक्ष स्वयं ज्ञापन लेने व अरावली बचाओ आंदोलनकारियों से मिलने आए थे। उसके 6 महीने के बाद ही सरकार ने कानून बनाकर, 7 मई 1992 को नोटिफिकेशन जारी किया था। अब फिर से अरावली बचाओ 1980 के आंदोलन को पूरे दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान और गुजरात में शुरू करने की जरूरत है।

मेरी आंखों में वर्ष 1980 में जयपुर की झालाना डूंगरी के खनन से नष्ट होती अरावली पर्वतमाला का कष्ट बहुत चुभ रहा था। जयपुर के भवन निर्माण कार्य अरावली के पत्थरों से ही हो रहे थे। झालाना डूंगरी, जयपुर के विकास के नाम पर विनाश का प्रतीक बन गया था। तब मैं भी खनन को विकास ही मानता था। 1988 में पालपुर गाँव के जन्सी मीणा, तिलवाड के गोपी कुम्हार और तिलदह के रूपनारायण जोशी व अन्य कई लोगों ने शाम के वक्त आग तापते हुए कहा कि खनन हमारे कुएं में पानी नहीं होने देगा। कुओं से ज्यादा गहरी खानें हैं। तुम जितना जल संरक्षण करोगे, वह सब खदानों में ही चला जायेगा। हमारे कुएँ तो सूखे ही

रहेंगे। खदानों को बंद कराना, आपके बस की बात नही है। आपकी औकात नहीं है, खान मालिकों से लड़ना। वे तुम्हे मार देंगे या मरवा देंगे। इनसे जो टकराता है, वह नष्ट हो जाता है। खदान मालिक सोचते है, जब हम पहाड़ खोद सकते है, तो आदमी की औकात क्या जो हमसे टकरायेगा।

सभी में भय व्याप्त था, डर रहे थे। मैं बिना डरे खनन बंद कराने में जुट गया। सबसे पहले नीलकंठ मन्दिर पर सभी का तीन दिन तक एक शिविर रखने हेतु, बैठक बुलाई गई। इसमें जितने बुलाए, उससे दोगुना ज्यादा लोग आए। जब शिविर शुरू किया तो सब डरे हुए ही बात कर रहे थे। बातचीत के बाद ही तो हम कुछ करने की तैयारी करें। शिविर के अंत में तय हुआ कि लोगों के डर को खत्म करने के लिए सबसे पहले खनन क्षेत्र में अखंड रामायण पाठ करेंगे, फलस्वरुप 22 स्थानों पर अखंड रामायण पाठ शुरू हुआ। इसमें खान मालिक, वन विभाग, ग्रामीण सभी शामिल हुए। सभी ने अपनी–अपनी बातें अखण्ड पाठ से समय निकाल कर की। इसके बाद सभी को बुलाकर इसका प्रभाव जाना, समझा और अंत में पर्यावरण संरक्षण यज्ञ तय किया गया।

भर्तृहरी में यह यज्ञ एक सप्ताह तक चला। पर्यावरण यज्ञ में भी सभी आगे आए। मैंने इस यज्ञ के दौरान पूछा कि खनन से क्या बिगाड़ हो रहा है? इस पर लंबी चर्चा हुई। यज्ञ की अंतिम आहुति में खनन बन्द कराने का संकल्प हो गया इस संकल्प में फतेह सिंह राठौड़ तथा कई अन्य अधिकारियो को मैने बुलाया था, पर वन विभाग के अधिकारी नही आये। खैर वन विभाग की तरफ से बातों का जबाव नहीं मिला।

खनन क्षेत्र को वन क्षेत्र सिद्ध करने में मुझे बहुत कठिनाई हुई। अंत में जब सिद्ध हुआ कि खनन क्षेत्र ही वन क्षेत्र है, तब उच्चतम न्यायालय से खनन बंद कराने का आदेश मिल गया।

उच्चतम न्यायालय के आदेश का पालन कराना बहुत कठिन रहा, असंभव लग रहा था। मेरे ऊपर जानलेवा हमले होने लगे। उच्चतम न्यायालय द्वारा गठित समिति के सामने ही मुक्त जानलेवा हमला हुआ। उस समय के जिला अधिकारी की गाड़ी में बैठाकर मुझे भेजा तो वह गाड़ी तोड़ दी गई और मुझे गंभीर चोटें आयीं। इसकी प्रतापगढ़ पुलिस स्टेशन में रपट लिखवाने पहुंचा, तो मेरे साथ चल रहे अधिकारी रिपोर्ट लिखवाने से मना करने लगे। समिति के अध्यक्ष न्यायमूर्ति ने कहा कि राजेन्द्र सिंह जी आप तो सामाजिक कार्यकर्ता हैं, तो माफ कर सकते हैं। तब मैने कहा कि मैं तो माफ कर दूंगा परंतु आप सभी न्यायमूर्ति, भारत सरकार व राजस्थान सरकार के उपस्थित अधिकारी कैसे माफ करेंगे। आप माफ करें।

तभी राजस्थान के प्रधान मुख्य वन संरक्षक ने कहा कि हम माफ नहीं करेंगे। हमारी वन भूमि पर कब्जा करने वालों ने राजेंद्र सिंह के ऊपर हमला किया है। यह हमारी जमीन, हमारे ही वन विभाग को दिलाने का ही काम कर रहे हैं, हमारा विभाग इनके साथ है। अपराधी को दंड मिलना चाहिए। तब न्यायमूर्ति चुप हुए। तब

जिला अधिकारी ने भी थानेदार से रिपोर्ट लिखने को कहा। रिपोर्ट में कुछ भी उलटा सीधा लिखवाते तो तत्कालीन प्रधान वन संरक्षक जोर–जोर से कहते थे कि हमने हमलावरों को, हमला करते समय देखा है। उनका नाम भी बता दिया और मौके पर मौजूद हमलावरों को वहीं पकड़ा दिया था। उच्चतम न्यायालय में इस घटना को न्यायमूर्ति एड. राजीव धवन ने उठाया और हमलावर को सजा दिलाई। इससे खदान मालिको में डर बढ़ गया और खदानें रुक गई।

उसके बाद खदान मजदूरों को तालाब, जोहड़ बांध बनाने के काम में लगा दिया। उस जमाने में हजारों जगहों पर जल संरक्षण का कार्य शुरू हो गया। मजदूर भी तरुण भारत संघ के साथ काम में जुट गए। आरंभ में खदान मालिकों ने मजदूरों को तरुण भारत संघ के खिलाफ भड़का दिया था, इसलिए वे काम पर आने से रुक गए थे। लेकिन जब खनन और मजदूरों के भविष्य का योग मजदूरों को समझाया गया, तो वे जल संरक्षण और खेती के काम में जुड़ने लगे। इस प्रकार उनमें मजदूर से मालिक बनने का भाव पैदा हुआ और हजारों मजदूरों को किसान बनना अच्छा लगने लगा था। उसके बाद तो बड़ी संख्या में किसान शिविरों में आने लगे थे। शिविरों में जल संरक्षण हेतु स्थान चयन से लेकर जोहड़, चैकडैम, एनिकट, बांध, बनाना सीखने लगे थे।

जब ये अरावली क्षेत्र के लोग जल संरक्षण करके, पानीदार बने तो वे दूसरों को भी चंबल, उदयपुर, अजमेर ,बीकानेर, टोंक, पाली, चित्तौड़गढ़ ,दौसा, सवाई माधोपुर, करौली, कोटा ,धौलपुर आदि जिलों में गांव–गांव जाकर पानी का काम सिखाने लगे। खनन से लोगों का रुझान कम हुआ और खेती में बढ़ने लगा। इस प्रक्रिया से हिंसक समाज अहिंसामय बन गया।

अब इन लोगों का पूरा जीवन चक्र बदलने लगा। यह बदलाव पहले लोगों में आया और फिर धरती पर भी बदलाव दिखने लगा। पत्थर फोड़ने को छोड़कर, अरावली के सफेद संगमरमर , डोलामाईट, ग्रेनाइट, लाइम स्टोन, यूरेनियम, तांबा सभी तरह के खनिज पदार्थ इस अरावली पर्वतमाला में मौजूद है। इन खदानों को बंद हुए 33 वर्ष हो गए है। जब इस पर्वतमाला को बचाने की न्यायपालिका और कार्यपालिका दोनों की इच्छा दिखाई दी, तब खान मालिक भी अपनी खानों को बंद करने लगे और शांत हुए।

अरावली में जल, जंगल संरक्षण की यह प्रक्रिया 1991 में आरंभ हुई थी। इसी कारण जहां–जहां जल, जंगल, जंगली जीव, जंगलवासी और जैव विविधता संरक्षण कार्य हुए, वहां–वहां हरियाली बढ़ने व अरावली पर्वतमाला के पुनर्जीवित होने से जलवायु परिवर्तन, अनुकूलन और उन्मूलन के अच्छे काम समाज में और धरती के ऊपर स्पष्ट दिखाई देने लगे थे।

वर्ष 2014 के बाद से फिर अरावली पर्वतमाला के ऊपर संकट के बदल मंडराने लगे। पहले अरावली पर्वतमाला की परिभाषा बदलने का दौर शुरू हुआ। उसके बाद 100 मीटर से ऊंची पहाड़ी ही अरावली है, यह कहा जाने लगा। हमने कहा कि पहाड़ों की पहचान उनकी ऊंचाई मात्र से नहीं होती, उनके मूल तत्त्व, बनावट, जैव विविधता आदि बहुत–सी जैव–विविधता सामग्री की मौजूदगी से पहाड़ों की पहचान बनती है।

सरकार अब सत्ता के उन्माद में संवेदनहीन होकर, उसे जो अनुकूल लगता है, वही करती रहती है। बहुत कुछ बोलने पर भी सरकारों ने नहीं सुना। अब तो भारत सरकार ने 10 किलोमीटर बाघ परियोजना से खनन की दूरी घटाकर 100 मीटर से 1 किलोमीटर तक की दूरी पर लाकर छोड़ा है। आजकल तो अरावली की वन भूमि को भी उद्योगभूमि में बदलने की पूरी स्वीकृति देना शुरू कर दिया है। अब तो ऐसा लगता है कि सरकार केवल उद्योगपतियों व खदान मालिकों के लिए ही काम कर रही है। भारत के वर्तमान और भविष्य की चिंता दिखाई नहीं देती।

भारत की आस्था तो पर्यावरण रक्षा है इसीलिए हम कभी पूरी दुनिया के गुरु थे। आजकल तो हम ही खनन करने वालों को संरक्षण दे रहे हैं। ऐसा करने से हमारी पहचान भी हमारे पड़ोसी देशों की जैसे ही बन रही हैं, जो अपनी अतिक्रमण, प्रदूषण और शोषण करने वाली विधियों के विशेषज्ञों के रूप में जाने–जाते हैं।

भारत ने पूरी दुनिया में प्रकृति प्रेमी के रूप में अपनी पहचान बनाई थी, पर आज वैसी पहचान नहीं रही। अब दुनिया के देश हमें भी प्रकृति के दुश्मन मानने लगे हैं, जबकि हम तो प्रकृति प्रेमी हैं। अरावली पर्वतमाला के साथ हमारे बुरे व्यवहार ने हमारी पहचान को दुनिया में बुराई की तरफ बदला है। अब बुराई में बदलने के सरकारी प्रयास और अधिक तेज हो रहे हैं, इसकी भारी चिंताएं बढ़ती जा रही हैं।अरावली में अब विनाश कार्य तेजी से शुरू हो रहे हैं। उन्हें रोकना बड़ी चुनौती है। अरावली विनाश की चुनौतियों को अवसर में बदलने हेतु जनता को ही तैयार होना होगा।

आज से 35 वर्ष पूर्व जब अरावली बचाओ आंदोलन की नींव डाली थी, तब मन में था कि, हमने अच्छा कार्य शुरू किया है, तो जनता भी आगे करा लेगी। हमने काम शुरू किया और अंतिम छोर तक लड़कर अरावली को बचाने की लड़ाई पहुंचाई थी, लेकिन अब वह उलट हो रही है। सरकार अरावली को बचाने के बजाय, उल्टा नष्ट करने के लिए कानून बना रही है। अब वन संरक्षण अधिनियम केवल अधिसूचित जंगल को ही जंगल मानेगा।

7 मई 1992, में अरावली को अरावली में सात तरह की भूमि, जैसे बीड़, बंजर, रखतबनी,राड़ा, रूँध आदि को वन भूमि माना था, उस पर भी अब शंका है। वन भूमि को व्यापारिक लाभ के लिए खुलेआम छूट देकर सरकार ने नई मान्यता "उद्योगपतियों की ही सरकार है–भारत की जनता की अब सरकार नहीं है।" स्थापित

कर दी है, लेकिन काम करने के लिए भारत उद्योगपतियों के लिए उद्योगपतियों का देश हो रहा है, लोकतंत्र केवल नाम मात्र है।

अरावली की जल संरचनाएं, जंगल, जमीन सभी जगह बिगाड़ हो रहा है। इस बिगाड़ को रोकने हेतु न्यायपालिका के निर्णय की पालना करना, अब सरकार ने बंद कर दिया है। भारत की न्यायपालिका सर्वोत्तम कही जाती है, परंतु अब वह अपने निर्णय पालना करने में बहुत कमजोर पड़ गई है।

वर्ष 2024 तक आते–आते अब पर्यावरण सुरक्षा हेतु लोग न्यायपालिका में जाते हुए भी डरने लगे हैं। न्यायपालिका अब बड़े लोगों और सरकारी साठ–गांठ की बातें अधिक सुनाने लगी है। न्यायपालिका तो भारत के गरीबों को न्याय दिलाती थी, अब केवल समझौते करती है। समझौते में तो सक्षम ही सफल रहता है, इसलिए अरावली के विनाश को देखकर भी लोग चुप हैं।

मैं जब भी न्यायपालिका के द्वार पर पहुंचा, देर तो हुई, लेकिन न्याय मिला है। तभी तो अरावली पर्वतमाला को बचाने हेतु उच्चतम न्यायालय से न्याय और भारत सरकार से कानून बनवाकर, राज्य सरकार द्वारा पालन करने में सफल रहा था। अब अरावली की गुहार कोई सुने और इसे बचाने के लिए आगे आए।

अरावली का जंगल बचेगा, तो दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान और गुजरात पानीदार बनेगा। जंगल पानी को पकड़ कर, धरती के पेट को भरते हैं, बादलों को बुलाकर बरसाते हैं। जब पहाड़ियों पर जंगल नहीं होता, खदानें होती हैं तो वहां गर्म हवायें चलने लगती हैं। बादल रूठ जाते है, बरसते नहीं है। तभी अरावली के गांवों के लोग लाचार, बेकार होकर शहरों की तरफ जाते है।

अरावली का जल, जंगल, जमीन बचाने के लिए अब अरावली के लोगों को 90 के दशक जैसा ''अरावली बचाओ आंदोलन'' ही खड़ा करना होगा। इस काम हेतु युवाओं को पानीदार बनने के लिए अरावली पर्वतमाला को पुनजीर्वित करने की प्रक्रिया पुनः शुरू करनी होगी।

5. खनन ने अरावली को ऊँच–नीच में बाँट दिया

'भारत की रीढ़ टूटने की कगार पर'

अरावली भारत की एकमात्र आड़ी पर्वतमाला है। भारत की अधिकांश पर्वत श्रृंखलाएँ मानसून के अनुकूल उत्तर–पूर्व दिशा में फैली हैं, किंतु अरावली इसके विपरीत दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व की ओर सीना ताने खड़ी है। इसका यह सीना पश्चिम से आने वाली रेत भरी आंधियों को अपने घने जंगलों में सोख लेता है। यही कारण है कि इसे भारत की रीढ़ की संज्ञा दी जाती है। यह विश्व की एकमात्र ऐसी प्राचीन पर्वतमाला है, जिसमें पुरानी चट्टानों के बीच–बीच में नए–नए रेत के टीले आज भी दिखाई देते हैं।

प्रो. एस.एस. डावरिया, जो उस समय जयपुर के बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ साइंटिफिक रिसर्च के निदेशक थे, ने रिमोट सेंसिंग के अध्ययन के बाद अपनी रिपोर्ट मेरे द्वारा दाखिल याचिका में उच्चतम न्यायालय में प्रस्तुत की थी। उस समय खनन से अरावली में 22 बड़े–बड़े गैप पैदा हो चुके थे। तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश श्री वेंकटचलैया जी ने मेरी बात सुनकर और रिपोर्ट देखकर भारत सरकार को निर्देश दिया था कि दिल्ली को इन रेत भरी आंधियों से बचाने के लिए अरावली को संरक्षित किया जाए। उसी के परिणामस्वरूप 7 मई 1992 को भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने अरावली संरक्षण अधिसूचना जारी की थी।

इससे पहले ही उच्चतम न्यायालय ने अरावली को एक समग्र पर्वतमाला मानते हुए इसे बचाने का ऐतिहासिक फैसला सुना दिया था। उस समय लगा था कि अरावली के आँसू पोंछ दिए गए हैं और उसका दर्द न्यायपालिका ने समझ लिया है। लेकिन आज, 20 नवंबर 2025 के उच्चतम न्यायालय के फैसले, रिपोर्ट्स और शपथ–पत्रों को पढ़कर दुख के साथ कहना पड़ता है कि "अरावली का दर्द न जाने कोय"। अब पहाड़ को भी ऊँच–नीच में बाँट दिया गया है। केवल 100 मीटर से अधिक ऊँची चोटियाँ ही अरावली मानी जाएँगी, उससे कम ऊँचाई वाली अरावली नहीं रहेंगी। उन छोटी–छोटी पहाड़ियों को खोज–खोज कर निकालो, जिन्हें हमने 1980 के दशक से बचाने की मुहिम छेड़ी थी।

अरावली के पुनर्जनन के लिए 1986 में हमने गोपालपुर गाँव में मेव जाति के लोगों के साथ मिलकर एक बड़ा बाँध बनाया था, ताकि पहाड़ियों पर पशुओं की चराई का दबाव कम हो। बाँध बनते ही गोपालपुर में पानी लौट आया। जो युवक लाचार, बेरोजगार और बीमार होकर गाँव छोड़कर शहर चले गए थे, वे कुओं में पानी देखते ही वापस लौटने लगे। तभी पालपुर गाँव के जंसी मीणा मेरे पास आए और बोले, "हमारे सारे कुएँ खदानों की वजह से सूख गए हैं। आप हमारे यहाँ भी जोहड़ बनवा दीजिए।" फिर हमने पालपुर में जंसी मीणा और तिलवाड़ी में छोटेलाल मीणा के नेतृत्व में जोहड़ बनवाए। छोटेलाल उस समय कहा करते थे,

"खनन पहाड़ को तो उजाड़ ही रहा है, हम भी उजड़ रहे हैं। आपने जो जोहड़ बनवाया है, उससे हम तभी टिक पाएँगे जब खनन पूरी तरह बंद होगा।"

तरुण भारत संघ ने दोनों गाँवों में जोहड़ बनवाए, लेकिन सारा पानी खदानों में चला जाता था क्योंकि खदानें कुओं से कहीं अधिक गहरी थीं। तभी से पानी बचाने की लड़ाई खनन के खिलाफ लड़ाई बन गई। जब उच्चतम न्यायालय के सख्त आदेश से खदानें बंद हुईं तो दोनों गाँवों के कुएँ फिर लबालब भर गए। इसके बाद जंसी मीणा का बेटा ख्याली राम मीणा, महेश शर्मा, गोपी कुम्हार मलाना ने मिलकर पूरे अरावली क्षेत्र में "अरावली बचाओ यात्रा" निकाली। पालपुर, तिलवाड़ी, तिलवाड़, वैरवा डूंगरी, बल्देवगढ़, गोवर्धनपुरा और मलाना के सरपंच पांचू राम ने प्रत्यक्ष सत्याग्रह करके खनन रुकवाया। मलाना में पाटनी और आर.के. मार्बल जैसे बड़े खान मालिक भी आए, लेकिन जन–सत्याग्रह के सामने उन्हें खदान चलाने की हिम्मत नहीं हुई। उस समय न्यायमूर्ति वेंकटचलैया जैसे निडर न्यायाधीश थे, जो पर्वतमाला और उसमें रहने वाले लोगों का दर्द सुनकर अरावली को न्याय देते थे।

10 अक्टूबर 2025 को मैं बेंगलुरु उनके घर मिलने गया था। उन्हें अरावली की पूरी कहानी याद थी। उन्होंने कहा था, "हमने भारत सरकार और राज्य सरकारों को स्पष्ट आदेश दिया था कि पहाड़ बचाने वालों को खनन माफिया से बचाना सबकी जिम्मेदारी है। राजेंद्र सिंह के खिलाफ कोई कार्रवाई करने से पहले उच्चतम न्यायालय की अनुमति लेनी होगी।" उस आदेश ने अरावली की जान और इज्जत बचाई थी। खान मालिकों ने मेरे खिलाफ दर्जनों झूठे मुकदमे दर्ज करवा दिए थे, पुलिस भी परेशान करती थी, लेकिन उस समय पर्यावरण कार्यकर्ताओं की सुरक्षा के लिए कानून था और उसका पालन भी होता था। उस समय पहाड़ का दर्द सुना जाता था, पहाड़ और पहाड़ बचाने वालों को न्यायपालिका बचाती थी। आज नहीं मालूम क्या हो गया है? अरावली की पीड़ा सुनने को कोई तैयार नहीं। जो अरावली की पीड़ा जानते हैं, वे बचाना चाहते हैं, लेकिन बचाने वालों की पीड़ा ही बढ़ती जा रही है।

अरावली तो लोगों और अपने जंगलों की पीड़ा कम करने के लिए आड़ी खड़ी हुई है। इसी कारण राजस्थान के रेगिस्तान की तुलना में अरावली क्षेत्र में कहीं अधिक और नियमित वर्षा होती है। अरावली में सीधी–सीधी दरारें (fracture) हैं, जिनके माध्यम से वर्षा का पानी सीधे भूजल भंडारों में पहुँचता रहता है। यही कारण है कि चारों राज्यों (राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली, गुजरात) में जहाँ अरावली है, वहाँ आज भी मीठा और सुरक्षित पेयजल उपलब्ध है। यह पर्वतमाला भूजल का सबसे बड़ा बैंक है। इसलिए कभी दिल्ली के खड़कपुर, हरियाणा के काला अम्ब, गुड़गांव–फरीदाबाद–नूह क्षेत्र को भूजल संरक्षित क्षेत्र घोषित करने की बात चली थी। हरियाणा में जहाँ पहाड़ियाँ हैं, वहाँ मीठा पानी है, बाकी मैदानी इलाकों में खारा।

यही स्थिति अरावली वाले चारों राज्यों में आज भी दिखती है। यदि इन पहाड़ियों में खनन हो गया तो बादलों का संतुलन बिगड़ जाएगा, मौसम चक्र अनियमित हो जाएगा, बाढ़–सूखा बढ़ेगा, फसलें घटेंगी, खाद्य और पेयजल सुरक्षा पर संकट गहराएगा, लोगों में बेचैनी बढ़ेगी। अब "सस्टेनेबल डेवलपमेंट" के नाम पर खनन से विनाश होने वाला है।

यदि हम अरावली की पीड़ा को समझ लें तो इस संकट को दूर करने की शुरुआत हो सकती है। हमें आज से ही अरावली को जानना और समझना होगा। वह स्वयं ही हमारा दर्द मिटाने का काम करेगी। हमें स्वच्छ जलवायु, खाद्य सुरक्षा, जल सुरक्षा देगी। हमारे गाँवों को बेरोजगारी, बीमारी और पलायन से मुक्त करेगी। यह हमें प्रदूषण, पर्यावरण शोषण और अतिक्रमण से मुक्त क्षेत्र की ओर ले जाएगी। लेकिन जैसे ही खनन खुलेगा, जंगल पर अतिक्रमण, जल स्रोतों में प्रदूषण और युवाओं का शोषण फिर शुरू हो जाएगा।

जंगल कटने से मिट्टी का कटाव बढ़ेगा, खेतों में सिल्ट जमा होगा, उपजाऊ जमीन कम होगी। पशुओं के लिए चारा और महिलाओं के लिए पेयजल का संकट गहराएगा। मेरा पुराना अनुभव यही है, जब खदानें चलती थीं, लोग मालिकों के मजदूर बन गए थे, गाँव उजड़ने लगे थे। जब खदानें बंद हुईं तो लोग अपनी जमीन सुधारकर खेती करने लगे। अब फिर खदानें खुलीं तो पहले जैसी बदहाली लौट आएगी।

अरावली के लोगों और अरावली का दर्द एक ही है। अरावली पर्वत की प्राकृतिक पीड़ा और उस क्षेत्र की मानवीय संस्कृति पर संकट एक साथ आ गया है। इसे रोकने के लिए हमें संकट को समझना होगा और खनन से अरावली को बचाना होगा। खनन–मुक्त अरावली न केवल भारत अपितु समूची दुनिया के लिए पर्यावरण सुरक्षा और सतत विकास का सबसे बड़ा वरदान सिद्ध होगी।

6. भारत की प्राचीनतम विरासत अरावली को बचाएं

अरावली की धमनियों में एक बार फिर वही पुराना दर्द लौट आया है। वह दर्द, जिसे 1980 के दशक में वैध–अवैध खदानों की गड़गड़ाहट ने जन्म दिया था और जिसे बंद कराने के लिए तरुण भारत संघ ने जो लड़ाई शुरू की थी, वह किसी जीत का अंत नहीं बल्कि एक लंबे युद्ध का पहला पड़ाव साबित हुआ। पंद्रह साल बीतते–बीतते यह साफ दिखने लगा कि खनन संगठन पहले से कहीं अधिक शक्तिशाली होकर लौट आए हैं। जहाँ कभी युवा ख्याली मीणा और अनगिनत ग्रामीण अरावली बचाने के लिए अपने घरों से निकल आए थे, वहीं अब वही पहाड़ फिर से खोदे जा रहे हैं, रात के अंधेरे में ट्रकों की लाइनें बढ़ने लगी हैं, पहाड़ियों की कटान दूर से ही गहरे घावों की तरह दिखती है, और गाँवों के कुएँ जिनका पानी कभी मीठा था, धीरे–धीरे उथले और कड़वे हो गए हैं। यह सबके सामने होते हुए भी व्यवस्था की आँखें जैसे बंद हैं।

भारत की प्राचीनतम विरासत अरावली पर्वतमाला है। यह दुनिया की दूसरी प्राचीनतम पर्वतमाला होने के कारण पूरी दुनिया का ध्यान इस पर गया है। सबसे पहले वर्ष 1980 में जयपुर में अरावली के संकट चिंतन शुरू हुआ। फिर 1990, के दशक के आरंभ में, जापान सरकार ने भारत सरकार के साथ मिलकर इसे पुनर्जीवित कराने के लिए, 1989 से 1999 तक, अरावली में पुनर्जीवन हेतु ग्रेनिंग अरावली परियोजना चलाई थी। तब ही तरुण भारत संघ ने अरावली को हरा बनाने की चेतना जगाने के साथ–साथ प्रत्यक्ष सामुदायिक आधारित काम भी शुरू किए थे। अरावली को हरा भरा बनाने हेतु 1986 में अरावली बचाओ सम्मेलन, भरथरी, अलवर में आयोजित करके, अरावली को बचाने का संकल्प लिया था।

पहले सरिस्का वन क्षेत्र की खदानें बंद कराने की मुहिम चलाई। यह खनन बंद होने पर फिर पूरी अरावली में "पर्यावरण यज्ञ" करवाया। गांव–गांव में खनन के खिलाफ रामायण पाठ कराया। 1991 में सरिस्का की 478 खदानें बंद हुईं। साथ–साथ उच्चतम न्यायालय के तत्कालीन न्यायमूर्ति श्री वेंकट चलैया जी ने श्री कमलनाथ जी, तत्कालीन वन और पर्यावरण मंत्री को पूरी अरावली को संवेदनशील क्षेत्र घोषित कराकर बचाने का निर्देश दिया था। भारत के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने ही दो नोटिफिकेशन जारी करके पूरी अरावली को संवेदनशील क्षेत्र घोषित किया था। उसमें तो अरावली की रखतबनी, काकड़, रुंद, बीढ़, बंजर सभी में खनन करने पर रोक लगा दी थी।

अरावली केवल पहाड़ियां ही नहीं थी बल्कि अरावली क्षेत्र की धरती को भी अरावली माना था। इसलिए हरियाणा, राजस्थान, दिल्ली, गुजरात चारों राज्यों के अरावली क्षेत्रों में उद्योगों और खनन जैसी गतिविधियों पर रोक लग गई थी।

दिल्ली को दो भू सांस्कृतिक क्षेत्र में देख सकते हैं। अरावली का हिस्सा खंडावप्रस्त कहलाता है और यमुना का हिस्सा इंद्रप्रस्त कहलाता है। इनमें से दिल्ली का एक वह क्षेत्र है, जहां की पहाड़ियां खंडावप्रस्त कहलाती है। ये पहाड़ियां दिल्ली से चलकर एक माला की तरह हिम्मतनगर गुजरात तक पहुंचती है।

सरकारी रिपोर्ट में कुछ क्षेत्र छूट गए है जैसे सबाईमाधोपुर, भरतपुर इनके कुछ ही हिस्से अरावली में आते है, चित्तौड़गढ़ तो अरावली के केंद्र में है। यहां दर्ज कई विरासत हैं, फिर भी यह पूरी तरह से नहीं दर्शाया गया।

अरावली को बचाना हमारी सरकार के लिए जरूरी है क्योंकि अरावली की संस्कृति और प्रकृति दोनों ही अपना एक स्थान रखती है। यहां के लोग जल, जंगल, जमीन, जंगली, जानवर, जंगलबासी सब बहुत निकटता से जुड़े हैं। खनन जैसे काम इसे तोड़ देते हैं, नष्ट करते हैं। हमारी संस्कृति में प्रकृति के योग से निर्मित "जीवन विद्या" हमें दुनिया का गुरु बनाने की तरफ लेकर जाती है। इसी भारतीय जीवन विद्या काल में हम दुनिया की 32 प्रतिशत जीडीपी थे (पूरी दुनिया की कुल 32 प्रतिशत आर्थिकी वाला भारत, अब खनन जैसे विकास से यही भारत देश 6 प्रतिशत आर्थिकी वाला देश बन गया है) । अरावली की आर्थिकी, प्रकृति व संस्कृति के योग से हम फिर 32 प्रतिशत जीडीपी की तरफ आगे बढ़ सकते हैं।

पहले जब अरावली में खनन बहुत था तब बीमारी, लाचारी थी। खनन रुकने पर जब बेकारी बढ़ी तब तरुण भारत संघ ने पूरे अरावली में जल संरक्षण एक मुहिम बतौर चलाकर, खेती में लोगों को लगाया था। तब से अरावली में खेती बहुत तेजी से बढ़ी थी। यही काम जलवायु परिवर्तन अनुकूलन है। इससे जलवायु परिवर्तन आपदा का समाधान मिलने लगा है। राजस्थान का अरावली क्षेत्र एकमात्र है जहां जलवायु परिवर्तन अनुकूलन व उन्मूलन हुआ है और इसकी प्रक्रिया तेजी से आगे बढ़ी है। इसी जमीनी अनुभव से कोप 21 में पेरिस में "जल से जलवायु, जलवायु परिवर्तन अनुकूलन, उन्मूलन होता है" यह सिद्धांत माना गया। पहली बार जल संरक्षण से खेती बढ़ाने पर जोर देना शुरू हुआ।

भारत में नाबार्ड ने भी 2016 में इस दिशा में काम शुरू किया था। अरावली में धीरे–धीरे हरियाली, खेती व जंगलों का बढ़ना शुरू हुआ था। लेकिन 20 नवंबर 2025 के उच्चतम न्यायालय के निर्णय ने बहुत सी शंकाओं को अब नया जन्म दे दिया है। अब वन, पर्यावरण व जलवायु परिवर्तन मंत्रालय बहुत ही प्रसन्न नजर आ रहा है, जबकि इस निर्णय से केवल खनन व उद्योग मंत्रालय की प्रसन्नता तो समझ आती है। वन मंत्रालय की प्रसन्नता भी शंकाएं पैदा कर रही है। इनकी प्रसन्नता तो मिली जुली कुरीति जैसा भाव पैदा कर रही है। जो निर्णय वन भूमि को कम करने वाला या वनों पर उद्योग का कब्जा बढ़ाता हो, उससे भारत के वन व जलवायु मंत्रालय की चिंताएं बढ़नी चाहिए। ऐसा नहीं होने से स्पष्टतः समझ आता है कि, वन विभाग भी उद्योग व खनन विभाग के लिए काम कर रहा है।

अब अरावली विरासत को बचाने के लिए कौन जिम्मेदार है? कुल मिलाकर फिर वही लोग हैं, जिनके मन में प्रकृति, संस्कृति की साझी चिंता है। जो साझे वर्तमान और भविष्य को समृद्ध बनाने का प्रत्यक्ष काम करने वाले हैं। उन्हें भी न्यायालय को अरावली के बारे में बुलाकर सुनना चाहिए था। वे लोग ही अरावली के संकट को सही तरीके से उच्चतम सामने रख सकते हैं।

वर्ष 1991 में चारों राज्यों के जनसंगठन व सभी संस्थाएं, संस्थान एक मंच पर आकर खनन रुकवाने में सफलता पाई थी। तब सरकारें भी अरावली के काम को अपना काम मानकर अरावली के मजदूरों को खेती के काम में लगाने के लिए आगे आ रही थी। मजदूरों की चिंता खासकर स्वास्थ्य सुरक्षा हेतु काम कर रही थी। तब अरावली बिल्कुल नंगी हो रही थी। खनन उद्योग पहले जंगल साफ करते थे, फिर खनन करके गोचर और अरण्य भूमि पर मलबा डालकर उसे बर्बाद करते हैं। तब पूरी अरावली में ओपन माइंस चल रही थी। खुला खनन ने पूरी अरावली में घाव पैदा कर दिए थे। सभी जगह अरावली के आंसू, अरावली की सूखी जलधाराएं में नही दिखते थे। बाद में जंगल बढ़ने से सूखी हुई सरिता पुनर्जीवित होकर अरावली को सभ्यता और संस्कृति, प्रकृति को पुनर्जीवित होने की राह पकड़ ली थी। इसे रमेश थानवी ने "अरावली का सिंहनाद" कहा था। श्री सिद्धराज ढड्ढा ने प्रकृति पुनर्जीवन प्रक्रिया कहा था। सर संघचालक श्री रज्जू भाई ने इस पूरी चेतना यात्रा को सभ्यता, संस्कृति पुनर्जीवन अभियान कहा था, सरसंघचालक श्री के सी सुदर्शन ने कहा कि अरावली की संस्कृति और प्रकृति को बचाने का यह बड़ा पराक्रम है। ऐसे सभी पर्वतमालयों में होना चाहिए। यह निर्भय और अनुशासित होकर जीवन जीना सिखाता है। उन्होंने दो बार अरावली में तरुण भारत संघ आकर इसे जल संरक्षण द्वारा प्रकृति और संस्कृति संरक्षण का योग कहा था। तब सर्व सेवा संघ के अमरनाथ भाई, लोकेंद्र भाई, तेज सिंह भाई, महावीर त्यागी आदि साथियों का योगदान रहा। जगत मेहता, ओमजी, किशोर भाई आदि ने अरावली को बचाने में बहुत साथ दिया था। आजकल अनिल मेहता,नंद किशोर शर्मा, तेज राजदान, प्रोफेसर शिव सिंह सारंग देवोत ,नीलम अहुवालिया, इब्राहिम खान आदि भी अरावली को बचाने का काम कर रहे हैं। आशा है अरावली बचेगी।

7. खनन बनाम जीवन की लड़ाई

कौन बचाएगा अरावली?

अरावली भारत की प्राचीनतम प्राकृतिक ढाल है, नदियों की जननी, वर्षा की साधक और सभ्यता की पोषक। सदियों से यह संस्कृति, जल और जीवन के संरक्षण की आधारशिला रही है। पर विडंबना यह है कि आज अरावली पर सबसे बड़ा संकट बाहरी आक्रांताओं से नहीं, बल्कि उसके संरक्षक कहे जाने वालों से ही उत्पन्न हो रहा है। शासन और उद्योग के गठजोड़ ने उसे लाभ की दृष्टि से देखने की परंपरा को इतना मजबूत कर दिया है कि इसके पर्यावरणीय, सांस्कृतिक और मानवीय मूल्य पीछे धकेल दिए गए हैं। इसी पृष्ठभूमि में हाल की घटनाएं अरावली के भविष्य पर गहरा प्रश्नचिन्ह खड़ा करती हैं।

20 नवंबर 2025 को उच्चतम न्यायालय ने सरकारों को ही अरावली में खनन करने हेतु जिम्मेदारी दे दी है। सरकारी अधिकारी, खनन उद्योगपति, व्यापारी और नेता एकजुट होकर इसकी हत्या करने की सारी तैयारी कर चुके हैं। अब चारों तरफ खनन को सुचारू करने में सभी जुटे हैं। इसलिए भारत सरकार का वन, जलवायु मंत्रालय तथा चारों राज्य सरकारें केवल उद्योगपतियों के लाभ हेतु ही ज्यादा चिंतित दिखाई दे रही हैं। इसी कारण अरावली में अन्याय सक्रिय है।

यदि सरकार अरावली पर अरावली की प्रकृति और संस्कृति रूपी विरासत को संरक्षण प्रदान करती, तो इस प्रकार के एफिडेविट और सरकारी रिपोर्ट तैयार नहीं होतीं। 100 मीटर ऊंचाई वाली पहाड़ियां कट गईं ऐसी बुनियादी बात को मान्यता मिलनी चाहिए थी, पर नहीं मिली। सरकारी वकीलों ने केवल खनन उद्योगों के लाभ हेतु ही काम किया है। फरवरी के लोगों, पर्वतमाला के जंगलों, जंगली जानवरों, पेड़—पौधों, घास, मिट्टी के स्वास्थ्य और सुरक्षा का कोई विचार नहीं किया गया है। स्वास्थ्य और सुरक्षा तो अरावली के पुनर्जीवन तथा सतत विकास का रास्ता है। यही रास्ता सभी के लिए शुभ और सुरक्षित है। यदि सरकारें इसी रास्ते पर चलने का प्रयास करतीं, तो न्यायालय में अरावली को न्याय मिल जाता।

सरकारों का "खनन सतत विकास" का नारा सत्य नहीं है, वह हिंसक है। अरावली स्वयं खनन की इजाजत स्वीकृत कर देती, यदि हमारी सरकारें खनन हेतु कुछ एक—दो क्षेत्र चुनकर पर्यावरण सुरक्षा के साथ खनन करतीं, ऐसे क्षेत्र जहां से पश्चिम की रेतीली हवाएं राजधानी क्षेत्र को प्रभावित न करें और दिल्ली का प्रदूषण न बढ़े। खनन सामग्री से चारों तरफ बीमारी, बेकारी या लाचारी नहीं बढ़नी चाहिए, ऐसा आज तक किसी भी खनन क्षेत्र में करके नहीं दिखाया गया है। पूरे भारत में खनन ने मूल निवासियों को उजाड़ने और उन्हें बीमार करने का ही काम किया है। खनन ने सभी राज्यों के प्राकृतिक समृद्धि क्षेत्रों में प्रदूषण, अतिक्रमण और शोषण करके उन्हें उजाड़ दिया है।

बच्चों को जन्म देने वाली स्त्री और नदियों को जन्म देने वाली अरावली दोनों को एक ही माना गया है। इसलिए अब अरावली को बचाना सबसे पहली प्राथमिकता बननी चाहिए। अरावली के गर्भ से सैकड़ों नदियों का जन्म हुआ है, जो खनन एवं जल–शोषण के कारण सूख गई थीं। तरुण भारत संघ ने पिछले 50 वर्षों में दर्जनों नदियों को पुनर्जीवित किया है। जब नदियाँ सूखती हैं, तभी सभ्यता और संस्कृति भी कमजोर पड़ने लगती है। हमारी सभ्यता, संस्कृति और सरिता का बहुत गहरा संबंध है। इसी संबंध के कारण नर से निर्मित नारी और नदी को एक ही माना गया है।

समुद्र के खारे जल को सूर्य वशीकृत करके भाप बनाता है। बादल भी जल के गैस–रूप ही हैं। बादलों को पुनः जल में बदलने का काम भारत की रेतली अरावली करती है, जो कि एकमात्र आदि पर्वतश्रेणी है। यह बंगाल की खाड़ी और अरब सागर से आने वाले बादलों के सामने आदि (आड़े) खड़ी होकर उन्हें वर्षा में परिवर्तित करती है। अरावली भारत के ब्रह्मा–रूपी भगवान मानी गई है, इसलिए भारत के ऋषियों ने अरावली के मध्य पुष्कर में ब्रह्मा सरोवर और ब्रह्मा मंदिर बनाया था। यह पूरे भारत में एकमात्र ब्रह्मा मंदिर है।

राजस्थान में जहाँ बादल उठते थे, वहीं अरावली के जंगल उन्हें बरसाते थे। खनन के कारण अरावली का तापमान 3 से 5 डिग्री तक बढ़ जाता है। पहले जयपुर की झालाना डूंगरी में खनन के कारण दोपहर बाद, जयपुर के अन्य हिस्सों की तुलना में, वहाँ का तापमान 1 से 3 डिग्री अधिक रहता था। सर्दियों में भी झालाना का तापमान जयपुर से अलग रहता था।

खनन अरावली की प्रकृति और संस्कृति दोनों के विरुद्ध है। इससे हमारी पारिस्थितिकी बिगड़ती है। हाँ, कुछ खनन–मालिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार होता है, परंतु अधिकतर लोगों को सिलिकोसिस जैसी भयानक बीमारियाँ हो जाती हैं, जिससे उनका स्वास्थ्य बिगड़ता है और फिर बीमारी के कारण आर्थिक स्थिति भी खराब होने लगती है।

अरावली की हरियाली ही हमारी अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी का आधार है। जैसे हमारे शरीर का आधार हमारी रीढ़ है, वैसे ही अरावली भारत की रीढ़ है, इसलिए इसकी सुरक्षा आवश्यक है। अरावली को खनन–मुक्त करना ही भारत की समृद्धि का मार्ग है। समृद्धि केवल आर्थिक ढाँचा ही नहीं है; हमारे जीवन–ज्ञान ने हमें 200 वर्ष पूर्व तक 32þ जीडीपी तक पहुँचाया था, तब भारत में बड़े पैमाने पर खनन नहीं था। हमारी खेती, संस्कृति और प्रकृति ने ही हमें समृद्ध बनाए रखा था।

अब अरावली की समृद्धि का ढाँचा खनन में नहीं, बल्कि हरियाली में है। हरियाली से बादल रूठकर बिना बरसे कहीं और नहीं जाते; अरावली में ही अच्छी वर्षा करते हैं। वर्षा का पानी खेतों में खेती करने हेतु रोजगार

के अवसर देता है। अरावली के जवानों को अरावली के जल के सहारे खेती–किसानी करने का अवसर मिलेगा।

अब अरावली के भी बुरे दिन आते दिखाई दे रहे हैं। अरावली को बुरे दिनों से बचाने का काम यहां की जनता को बिना डरे ही करना होगा जैसे पहले भी किया था। अब एक बार फिर से यह काम शुरू करना होगा। अरावली की सच्चाई समझकर काम करने से ही शुरुआत होगी। जब हम अरावली की पीड़ा की सच्चाई समझेंगे, तभी दूसरों को समझा सकेंगे। फिर संगठन शक्ति ही अरावली को सहेजने वाला सत्याग्रह आरंभ कर सकती है। हमारे सामने अरावली की प्रकृति और संस्कृति को मिटाने वाली चुनौती है और इसका सामना हम सब मिलकर ही कर सकते हैं।

अरावली को न्याय दिलाने हेतु 7 दिसंबर को जयपुर में एक न्यायिक प्रक्रिया शुरू करने का विचार है। खनन किसी स्थान की पानी और जवानी दोनों को बर्बाद करता है। अरावली को भारत की 'ढाल' इसलिए माना जाता है क्योंकि यह भारत की शान जिसमें पानी और जवानी का संरक्षण रहा है, को बचाती आई है। खनन से अरावली में क्षरण होता है। पानी बह जाता है। क्षरण और कटाव के कारण खेती–किसानी मिट जाती है, जवानी बेरोजगार हो जाती है। तब अरावली में न तो स्त्री–माँ जैसा पोषण करने की शक्ति बचती है, और न ही नदियों–सरिताओं को शुद्ध सदानीरा बनाए रखने वाले जलस्रोत बचे रहते हैं।

जहां–जहां खनन हुआ, वहां के सभी झरने सूख गए थे। जब खनन बंद हुआ तो सभी झरने पुनः पुनर्जीवित होकर बहने लगे। चरनों से जहाजवाली नदी, बागनी, सरस, अरावली, रूपारेल, महेश्वर, शेरनी, देवरा, मनोहर, मतदार आदि नदियां शुद्ध सदानीरा बनकर बह रही हैं। खनन से अरावली बांध बन जाती है। अरावली की प्राकृतिक उत्पादकता बहुत है। इसे बनाए रखने हेतु प्राकृतिक संरक्षण, संवर्धन और कलेक्शन की बहुत जरूरत है। इसकी अनदेखी अब उचित नहीं है।

8. धरती माँ की कराह

‘पर्वत का दर्द, सभ्यता का प्रश्न’

अरावली पर्वत माला हमारी धरती माता के गर्भ से निकली है। इसका खनन करना माँ के गर्भ में ही बच्चे को मारकर निकालने जैसा पाप कर्म है। यही हमें अपने गर्भ से जल देती है, खनन से इसकी गर्भ नालियाँ कट जाती हैं। इसके ऊपर बहने वाली नदियाँ सूख जाती हैं। खेती, वनौषधियाँ, जंगल, जीव–जंतु, जीवाणु जो हमारे जीवन के लिए ज़रूरी हैं वे मरने लगते हैं। यही हमारे विनाश की शुरुआत है। यही हमारी पर्वत माला का दर्द है।

अरावली हमारी धरती माता है। उसके गर्भ से खिलवाड़ करना हमारे लिए आर्थिक विनाश का सबसे बड़ा कारण बनेगा, क्योंकि हमारे लिए भूजल का पुनर्भरण तो अरावली की दरारों द्वारा ही होता है। इसकी दरारें ही सभी जगह पेयजल का पुनर्भरण करती हैं। इसी के कारण चारों राज्यों को सुरक्षित पेयजल उपलब्ध हो रहा है। अरावली का खनन इसके सभी जल स्रोतों को दूषित–प्रदूषित करके सूखा देगा। उसे पुनर्जीवित या परिशोधित करने का कोई रास्ता भी हमारे पास नहीं बचेगा।

खनन पहाड़ों को काटकर पश्चिम के रेगिस्तान को पूर्व दिशा में रेत के नाले–टीलों में बदल देगा। इससे खेती का उत्पादन बहुत तेजी से घट जाएगा। यह खनन भारत की अर्थिकी और पारिस्थितिकी को बुरी तरह प्रभावित करने वाला है। इसलिए अरावली को खनन नहीं, हरियाली दिलाना ही सच्चा न्याय होगा। न्यायालय अरावली को खनन नहीं देकर हरियाली दिलाने वाली पहले की तरह ”हरित अरावली” परियोजना चलवाए। यह चारों राज्यों में यहाँ की खेती को प्राकृतिक बनाने में मदद करेगी, जैसे उत्तर–पूर्व के पहाड़ी क्षेत्रों सिक्किम, नागालैंड, असम की खेती को प्राकृतिक बनाने में भारत सरकार खुली छूट दे रही है। वैसे ही राजस्थान ही नहीं, पूरी अरावली के चारों प्रदेशों में आर्थिक मदद देकर प्राकृतिक खेती में अरावली की प्रकृति से समृद्धि के बारे में विचार करने की ज़रूरत है।

प्रकृति की समृद्धि ही संस्कृति को भी समृद्ध बनाएगी। हमारी मान्यता है कि इंद्र, मित्र, वरुण बादल हमारी हरियाली और पहाड़ियों में ही वर्षा करते हैं। इसी लिए हम पत्थर–पहाड़ को पूजते रहे हैं, क्योंकि हम त्याग कर ग्रहण करने वाली संस्कृति (लॉ ऑफ़ सेक्रिफ़ाइस) वाले हैं। अब हमारी सरकार (लॉ ऑफ़ सेक्रिफ़ाइस) की जगह (लॉ ऑफ़ एक्सप्लोइटेशन) को मानती है। इसीलिए प्रकृति का शोषण ही जब सरकार का लक्ष्य बन गया है, तब अरावली कैसे बचेगी? हाँ, बचेगी यदि हम अरावली बचाने हेतु यज्ञ करें तथा उच्चतम न्यायालय से अपने निर्णय पर पुनः विचार करने की जनहित याचिका लगाएँ।

पाँच सरकारें भारत, गुजरात, राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली पर जनदबाव बनाएँ। वे अरावली का दर्द जानें और अरावली को बचाने हेतु उसकी वैज्ञानिक, प्राकृतिक, सांस्कृतिक, योगिक परिभाषा को जानें और स्वीकार करें। 100 मीटर ऊँची पहाड़ियाँ ही अरावली नहीं होती हैं। यह परिभाषा तो अरावली को नष्ट करने वाली परिभाषा है। इसकी मूल परिभाषा "अरावली सम्पूर्ण पर्वत माला है"; खनन इसे खंडित करके इसका दर्द बढ़ाएगा।

अरावली के बड़े हिस्से में प्राकृतिक खेती के स्वस्फूर्त प्रयोग चल रहे हैं। सरकार एक विधिवत कार्य–योजना बनाकर काम करेगी तो यहाँ की संस्कृति और प्रकृति दोनों समृद्ध होंगी। अरावली की रासायनिक व ज़हरीली खाद–दवाई का दर्द कम होगा।

अरावली ने भारत को दो बड़े वन्यजीव राष्ट्रीय उद्यान दिए हैं। बहुत से वन्यजीव अभयारण्य दिए हैं। अब इनकी व्यावसायिक नीति, उद्योग, अतिक्रमण, प्रदूषण और शोषण करने पर अड़े हैं। सरकार वन एवं वन्यजीव बचाने की प्रतिबद्धता और कुशलता–दक्षता बढ़ाने हेतु वन विभाग के कर्मचारियों–अधिकारियों का आदिक शिक्षण, प्रशिक्षण एवं साधन सम्पन्न बनाए। इनके नैतिक अधिकारों का इनको पालन करने दे। इनके कार्यों में आर्थिक ढाँचा बहुत व्यवधान करके इन्हें लचर बना रहा है। इनकी लाचारी–बीमारी मिटेगी तो ये अरावली के दर्द को दूर करने में सक्षम बन सकेंगे। वनों में रहने वाले वन कर्मचारियों को अधिक सुरक्षा प्रदान करनी चाहिए।

ये कुछ भी अच्छा करते हैं तो इनको उसका श्रेय नहीं मिलता। अच्छे का श्रेय नेता पाता है। इनसे कुछ भूल या गलती होती है तो सजा इन्हें ही भुगतनी पड़ती है। भुगतनी भी चाहिए, लेकिन इनके अच्छे कर्मों का श्रेय भी इन्हें दिया जाए।

अरावली दुनिया की पुरातन विरासत है। इसको और इसकी विरासत बचाने वाली एक परियोजना पर काम करना चाहिए। यह आज बेचारी अरावली बनकर अपने ही आँसू बहा रही है। सरकार इसमें खनन द्वारा और गहरे घाव करके इसे खत्म करने पर तुली है। विरासत के रखवाले तो इसकी विरासत को नष्ट करने के काम ही कर रहे हैं। विरासत के मामले में तो ऐसा लगता है जैसे अरावली की बढ़ ही अरावली को खाने की तैयारी में जुट गई है।

अरावली में सबसे गहरा घाव 20 नवंबर 2025 को हुआ है। इसे तत्परता से पुनर्विचार करके नहीं रोका तो अरावली का घाव फिर कभी नहीं भरेगा। यहाँ की सभी परंपराएँ, धराड़ियाँ, प्रत्येक जाति–गोत्र अपनी आँखों के सामने एक खास किस्म के पेड़ को कटने नहीं देंगे, बचाएँगे। अरावली के सभी उत्सव, तीज–त्योहार प्रकृति–संस्कृति को समृद्ध बनाने वाले हैं। अरावली का खनन उनमें भी प्राकृतिक सामग्री के स्थान पर प्रकृति–विरोधी रासायनिक सामग्री ले आएगा। लोगों को लोभी–लालची बनाएगा। खनन करने वालों का लालच

सबसे बड़ा दर्द होता है। हमारे जीवन में जैसे ही लालच बढ़ता है, हमारी मूल प्रकृति और संस्कृति बदलने लगती है। इनके बदलने से सभ्यताएँ सूखकर मरने लगती हैं। भोगी सभ्यता का जन्म होता है।

अरावली को खनन के कारण कुएँ, बावड़ी, झालरे, तालाब, जोहड़, सरिताएँ (नदियाँ) सभी सूख गई थीं। जब सरिताएँ (नदियाँ) सूखती हैं तो सभ्यता भी मरने लगती है। अरावली के खनन–दर्द से यहाँ की सभ्यता सूखेगी और मरेगी। 1991 में खदान बंद होने से नदियाँ पुनर्जीवित हुई हैं और यहाँ की मूल सभ्यता का पुनः जन्म हुआ है।

अरावली का जलवायु परिवर्तन से बेमौसम वर्षा होगी। खनन तापमान बढ़ाएगा, तो फिर वर्षा की कमी से सूखा आएगा। बादल फटेंगे, तो बाढ़ आएगी। नंगी, कटी पहाड़ियों में बादल फटने की घटनाएँ बढ़ जाती हैं। ऐसे सभी क्षेत्र बाढ़–सूखा प्रभावित क्षेत्र बन जाते हैं। यही बाढ़–सुखाड़ की प्रलय (विनाश) अरावली का दर्द है।

9. प्रकृति पोषक बने, खनन नहीं

खनन रोकें, अरावली को पोषक बनाएं

क्या वाकई हम इतने अधिक हो गये कि पेट भरने के लिए अधिक उत्पादन की होड़ में अरावली की प्रकृति (धरती) का मर्यादित उपयोग भूल बैठे हैं? यह महज एक तथाकथित पाश्चात्य संस्कृति का फैलाया हुआ भ्रम है। वैसे भी भारत जैसे खेतिहर देश, जिसकी बुनियाद धरती से जुड़ी है, वहाँ यह बात असफल होती है कि बढ़ती जनसंख्या के उपभोग हेतु प्रकृति का बेहिसाब शोषण किया जाए। यह बात अपने में सार्थक है कि जो हाथ जमीन से जुड़े हों, वे कभी भूखे नहीं मर सकते।

खेती के मामले में, "हरित क्रान्ति" जो श्रायातीत पद्धति है, ने तो धरती का इस प्रकार दोहन किया है कि पंजाब, हरियाणा जैसे हरियाली के लिए मशहूर राज्य भी गेहूँ और धान की जगह ए.के. 47 (राइफल) उगने लगी हैं। अतः आज हमारा किसान पूर्णतः आयातित खेतिहर हो गया है। भिन्न–भिन्न किस्म के महंगे रासायनिक खाद, संकर बीज, कीटनाशक दवाएँ, कृत्रिम सिंचाई तथा आधुनिक उपकरणों ने न केवल मिट्टी की उर्वरता को ही खतरे में डाल दिया है, बल्कि करोड़ों लोगों को बेरोजगार बना दिया है।

अब अरावली के पहाड़ खोद कर हमारे पेट भरने का काम चालू होगा। 20 नवंबर 2025 को उच्चतम न्यायालय निर्णय दे चुका है।इस निर्णय पर पुनर्विचार होना आवश्यक है। अरावली की खेती शोषक नहीं, पोषक बननी चाहिए।

क्या इस आधुनिक तरह की खेती के चलते हमारा भरण–पोषण होता रहेगा? नहीं। शायद नहीं। इसका जवाब आज वे देश अच्छी तरह दे सकते हैं, जो "हरित क्रान्ति" तथा विकास के शिकार हो चुके हैं। जब संयुक्त राष्ट्र की समझ में आया कि हम नाश के कगार पर हैं, तो ब्रुंडलैंड आयोग , जिसे औपचारिक रूप से विश्व पर्यावरण एवं विकास आयोग के नाम से जाना जाता है, बना।

बेहिसाब रासायनिक खाद जमीन में डालने से जमीन बंजर बन रही है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार 20 लाख लोग प्रतिवर्ष कीटनाशक दवाइयों की चपेट में आते हैं, जिसमें 40 हजार लोग अकाल मौत मर जाते हैं। बात यहीं तक सीमित नहीं है। फसलों में डाली गई कीटनाशक दवाई अपना कुप्रभाव प्रत्येक उपभोक्ता पर डालती है, जिससे तरह–तरह की बीमारियाँ जन्म ले रही हैं। इसके बावजूद भी क्या हानिकारक कीट खत्म हो रहे हैं? शायद नहीं। बल्कि एक नयी तथा शक्तिशाली जाति के कीट की उत्पत्ति हो जाती है।

तथाकथित सुधरे संकर बीज न केवल भिन्न–भिन्न प्रकार की बीमारियों तथा कीट को आमंत्रित करते हैं, बल्कि वे उस जलवायु विशेष में उगने के अनुकूल भी नहीं होते। अधिक पैदावार देने वाली किस्मों (संकर किस्म) ने सघन खेती वाले इलाकों में जमीन के अंदर खनिज तत्वों (गंधक, तांबा, जस्ता आदि जैसे) की कमी उत्पन्न कर वहाँ के लिए एक और खतरा पैदा कर दिया है। सिंचाई के लिए बड़े–बड़े बाँध, विशाल नहरें, बिजलीघर आदि के बनाने में लाखों हेक्टेयर जमीन बर्बाद की जा रही है। इसका ताजा उदाहरण "नर्मदा परियोजना" हमारी आँखों के सामने है।

इस प्रकार खेती, विकास के नाम पर धंधा नहीं, व्यापार बनकर रह गई है। करोड़ों–लाखों लोगों का धंधा आधुनिक उपकरणों ने हथिया लिया है। बैलों की जगह ट्रैक्टर, थ्रेशर, इंजन ने ले ली है, जिससे हमारा पशुधन तथा उनसे मिलने वाली गोबर खाद आदि चौपट हो गई है।

वैसे इस सबको देखकर अब हमारी आँखें खुलने लगी हैं कि हम तो नाश के कगार पर खड़े हैं, लेकिन यह भी सोचना होगा कि इसका विकल्प क्या हो?

"विकल्प" के लिए बहुत ज्यादा परेशान होने की जरूरत नहीं है। "विकल्प" तो हमारे सामने है, बस थोड़ा पीछे भर देखने की जरूरत है, अपनी परम्परागत खेती पर। हमारी परम्परागत खेती में इस प्रकार का ध्यान रखा जाता था कि जितना हम धरती से लेते हैं उतना ही उसे अपने शरीर श्रम से पोषण दें। फलस्वरूप उपज तथा प्रकृति के बीच एक अटूट संतुलन बना रहता था। अतः जमीन से आवश्यकतानुसार उत्पादन तथा पारिस्थितिकी के बीच संतुलन को हम टिकाऊ, पारिस्थितिकी या परम्परागत खेती कहते हैं।

खेती खाती नहीं, सबको देती थी। अब तो खेती भी सभी कुछ खाने लग गई है। इसी लिए लोभी लालची विकास ने प्रदूषण, शोषण, अतिक्रमणकारी उद्योगों और खनन को जन्म दे दिया है। यह हमारे लिए बहुत ही विनाशक बन रहा है। यह तो प्राचीनतम अरावली पर्वतमाला को भी खा जाएगा।

मिट्टी, गोबर तथा कूड़े–करकट से बना खाद खेतों को केवल उपजाऊ ही नहीं बनाता बल्कि मिट्टी में नमी भी बनाता है तथा हानिकारक कीट (जैसे दीमक) को भी खेत में नहीं पनपने देता। अरावली के ज्यादातर गाँवों में लोग कीटनाशक के रूप में घरेलू उपचार करते हैं, जिससे न तो किसी प्रकार की हानि होती है न ही बाजारू कीटनाशक रासायनिक घोल खरीदने की जरूरत होती है। यदि खेत से दीमक भगानी है तो गोबर (बकरी के मींगन) की खाद की मात्रा खेत में बढ़ा दी जाती है तथा खेत की मेड़ों पर आंकड़े के पौधे बो दिए जाते हैं। नीम, महुआ, केला आदि भी अच्छे कीटनाशक वृक्ष हैं।

खेत में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ानी होती है तो हरी खाद बो देते हैं। सनई व ढेंचा इसके सबसे अच्छे उदाहरण हैं। फसलों को अदल–बदल कर बोना भी खेत को उपजाऊ बनाए रखता है। जकड़ा जड़ों वाली

फसल के बाद मूसला जड़ों वाली फसल बोने से उर्वरता बनी रहती है। द्विफलीय फसलें बोने से खेतों में लगातार उर्वरक तत्व बने रहेंगे।

अपनी परम्परागत खेती के चलते कभी भी सिंचाई के लिए बड़े–बड़े बाँधों की जरूरत महसूस नहीं की गई। लोग वर्षा के पानी पर ही निर्भर रहते थे, किन्तु आज के हालात तो ये हैं कि अपने पानी के भंडार भी खाली नजर आने लगे हैं। लेकिन कुछ जगह आज भी बरसाती पानी इकट्ठा करने की परम्परा मौजूद है, या यूँ कहिए कि एक बार बीच में झटका लगने के बाद दोबारा उन्होंने पानी की परम्परागत पद्धति अपनाई है। उदाहरणतः अरावली के गाँवों में पिछले पचास वर्षों में लोगों ने बरसाती पानी प्रबंधन हेतु 15800 छोटे परम्परागत तालाब व बाँध बनाए हैं, जिनसे 23 नदियाँ पुनर्जीवित होकर शुद्ध सदानीरा बनकर बहती हैं।

यदि आधुनिक खेती को छोड़ कर परम्परागत खेती को न अपनाया गया, तो वह दिन दूर नहीं जब हमारा देश भी पाश्चात्य देशों की भाँति पछताएगा।

फिर भी खनन एवं उद्योग ही जमीन को खेती के योग्य नहीं छोड़ेंगे। इसलिए खेती को बाज़ार नहीं, संस्कृ ति–प्रकृति का योग्य बनाएँकृयही जलवायु परिवर्तन के वैश्विक संकट का अनुकूलन और उन्मूलन है।

खेती से 200 वर्ष पूर्व तक हमारी जी.डी.पी. 32þ हो गई थी। अब तो खेती और उद्योगों के लालची विकास ने इसे पैंदे में बैठाकर 6þ पर लाकर खड़ा कर दिया। कभी–कभी तो यह 3þ पर भी पहुँच जाती है। इसलिए प्राचीनतम विरासत, अरावली के लोग खड़े हों। विनाशकारी खनन एवं उद्योगों से बचाएँ। इसे सांस्कृतिक और प्राकृतिक बनाकर ऐसा डिज़ाइन बनाएँ जिससे यह विकास, विस्थापन, बिगाड़ और विनाश मुक्त बना रहे।

लालची विकास वाली खेती तो प्रदूषण, शोषण करके किसानी, पानी, जवानी को बेकार बना देती है। इससे अरावली को उजाड़मुक्त बनाएँ। यहाँ की खेती, खनन, उद्योग अरावली का शोषक नहीं, पोषक बने।

10. अरावली की पर्यावरणीय परम्पराएँ

"परम्पराएँ" क्या होती हैं यह तय कर लेना ही न्यायसंगत होगा। हमारी परम्पराओं को रूढ़ियाँ और अन्धविश्वास बताने वालों ने वेद—उपनिषदों से निकले रीति—रिवाजों को 'परम्परा' बताया है। किन्तु ऐसा है नहीं। हमारे वेद और उपनिषद भी परम्पराओं के द्वारा बने हैं। हमारी सनातन परम्पराओं को ऋषियों—महर्षियों ने चारों आश्रमों शिक्षा, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास के तहत परीक्षण, परिवर्धन किया और तब उन्हें वेद की ऋचाओं के रूप में स्वीकार किया।

हमारी परम्पराओं में व्यक्तिवादी, जीवनवादी, समाजवादी और विश्ववादी दृष्टियाँ सीधे परिलक्षित होती हैं। जबकि पाश्चात्य सभ्यता में मनुष्य का अस्तित्व मशीन के साथ मिलाकर देखा जाता है। प्रो० एम. एन. राय महात्मा गांधी की घोर आलोचना तो करते थे किन्तु बापू को भारत की सारी परम्पराओं का प्रतिनिधि कहकर उन्होंने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की थी।

यावद् जीवेत् सुखं जीवेत्, ऋणं कृत्वा घृतं पीवेत्।

भस्मभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।

ऐसी चीजें हमारे सनातन में भी उपजीं। किन्तु अभिज्ञान शाकुन्तलम् तभी रचा जाता है और तभी भगवान बुद्ध का भी अवतार होता है। बुद्धिवादी परम्पराओं की बजाय श्रुतिवादी परम्परा के अनुयायी ब्राह्मणों ने तो बुद्ध को उच्छेदवादी, भारतीय परम्पराओं की जड़ काटने वाला तक कहा था किन्तु बुद्ध तो "एष धम्मो सनन्तनो" सनातन धर्म की परम्पराओं के पुनर्स्थापक थे। किन्तु आज पुनः "सुख से जियो, ऋण लेकर घी पियो" की नीति सिखाई जा रही है।

अरावली की पारिस्थितिकी, पर्यावरण और परंपराएँ

शब्द "पारिस्थितिकी" हिन्दी भाषा का एक पूर्ण शब्द नहीं है। किन्तु हिन्दी साहित्य में देशज शब्दों की परम्परा एक तरह से नए शब्दों को आमंत्रित करने की विधा ने जहाँ एक तरफ भाषा को समृद्ध बनाया है वहीं कुछ बुराइयाँ भी पैदा की हैं। और यही कारण है कि हमारी संस्कृति और सभ्यता पर बाहरी सभ्यताओं के आक्रमण भी कामयाब रहे हैं।

आंग्ल भाषा के शब्द "इकोलॉजी" के भावार्थ के रूप में "पारिस्थितिकी" को स्वीकार किया गया है। यही कुछ पर्यावरण के साथ भी हुआ है। इसकी भारतीय संस्कृति और सभ्यता में "प्राणावरण और चिंतावरण" के रूप में व्याख्या की गयी है

"दशकूप समावापी, दशवापी समो हृदः।

दश हदः समोपुत्रो, दशपुत्रः समोपुमः।।”

(अर्थात् दस कुआँ के समान एक बावड़ी, दस बावड़ियों के समान एक तालाब, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र तथा दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष मूल्यवान है।)

भारतीय दर्शन ने पारिस्थितिकी और पर्यावरण को कभी भी अलगअलग करके नहीं देखा। तभी हमारी सनातन सभ्यता विश्व गुरु के रूप में प्रतिष्ठित हुई थी, लेकिन पश्चिमी संस्कृति ने तो एकदम उलटी ही गंगा बहाई। इस संस्कृति ने तो पर्यावरण को मनुष्य का शत्रु बताया। पर्यावरण को मनुष्य के विकास और अस्तित्व की बाधा के रूप में निरूपित किया है।

दुनिया में ख्यातिलब्ध वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन ने अपनी विचारधारा ”सर्वाइवल ऑफ द फिटेस्ट” में प्रकृति को बड़े और तेज़ नाखूनों वाली राक्षसी बताया है जो मानव को मारकर खा जाना चाहती है। अतः मानव को उस राक्षसी के खिलाफ संघर्ष करना है, उसका दमन और शोषण करना है, विज्ञान के द्वारा अपने पर्यावरण को भी नियंत्रण में रखना है ताकि मानव उसका शोषण कर अधिक दिनों तक जिन्दा रह सके।

अफसोस कि रशमान रुशदी की हत्या के लिए तो चारों तरफ से फ़रमान जारी हो रहे हैं किन्तु सारी पश्चिमी सभ्यता उसी नामुराद डार्विन की राह पर चल रही है। इसके विपरीत भारतीय सनातन संस्कृति में मानव अपने आपको पर्यावरण का ऋणी मानता है, क्योंकि वह उसके द्वारा उपकृत होता है। पर्यावरण के प्रति ऋणशोधन करना वह अपना कर्तव्य मानता है किन्तु वह तब तक उऋण नहीं होता जब तक पर्यावरण से प्राप्त अपना शरीर पर्यावरण को वापिस नहीं कर देता। किन्तु खतरनाक बात तो यह है कि ऐसी सनातनी पवित्र संस्कृति पर डार्विन की नायक पाश्चात्य संस्कृति भारी पड़ रही है।

सनातन संस्कृति में प्रकृति और पर्यावरण हमारी माँ है। विज्ञान के प्रयोगों द्वारा हम उसके स्वभाव को जानकर उसके साथ व्यवहार करते हैं। वह गलतियों के लिए किसी को माफ नहीं करती। हम उसका दोहन करते हैं, उपयोग करते हैं, अपना जीवन निरापद बनाते हैं जबकि पाश्चात्य सभ्यता हमें उसके उपभोग के लिए उसके शोषण का मार्ग सुझाकर जीवन को विलासी बनाने का काम करती है। पर्यावरण के उपयोग व दोहन से वह और भी अधिक पुष्पित–पल्लवित तो होती ही है साथ ही हमारा जीवन भी सुखमय–शांतिमय बना रहता है। जब प्रकृति के उपभोग व शोषण से पर्यावरण प्रदूषित होता है तो हमारा जीवन भी रुग्ण हो जाता है। जीवन की इसी रुग्णता को हम प्रकृति का प्रकोप मानते हैं, जबकि हमारे संयमित ऋषि,उचित जीवन को पाश्चात्य सभ्यता ने पिछड़ापन कहा है।

आज हमारे समाज में प्रकृति व पर्यावरण के दोहन व शोषण के स्पष्ट उदाहरण मौजूद हैं। इनके परिणाम और दुष्परिणाम भी हमारे सामने स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। हम दूर क्यों जाएँ, अपने अरावली को ही क्यों न

देखें। सरिस्का के मूल निवासियों का मुख्य पेशा पशुपालन है। उनके पालतू पशु वन की घास और पेड़ों की पत्तियाँ चरकर दूध और घी की नदियाँ बहा रहे हैं। पशुचारण से जंगल को क्षति नहीं होती बल्कि पशुचारण जंगल के लिए स्वास्थ्यवर्धक है।

ग्रामीण जब अपने पालतू पशुओं के लिए जल संचय करता है तो वह जंगली पशुओं, पेड़–पौधों के जीवन रक्षा का काम भी पूरा कर रहा होता है। उसके पशुओं को वर्ष भर चारा मिलता रहे, अतः वह पशुचारण में अपने संचित पारम्परिक ज्ञान का प्रयोग भी करता है। कल्पना कीजिए पशुचारण की इस सारी प्रक्रिया में कहीं पर्यावरण प्रदूषित हुआ क्या? पशुओं के मलदमूत्र की खाद, संचित जल और पेड़ों की आवश्यक छँटाई से तो जंगल अधिक समृद्ध होगा, पर्यावरण संतुलित होगा यह है दोहन का एक उदाहरण।

दूसरी तरफ सरिस्का नेशनल पार्क के कौर नं. 3 में 150 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में डोलोमाइट पत्थर की वैध और अवैध खदानें पारिस्थितिकी के शोषण का सच्चा प्रतीक हैं। इन खदानों से किसी के जीवन को विलासी बनाने वाले तमाम प्रकार के अवयव बाहर निकाले जा रहे हैं। खनन कर्म से सीधे सम्पर्क में आने वाली व्यवस्था को आर्थिक लाभ तो मिल रहा है किन्तु शांति और सुख मिल ही रहा होगा यह निश्चित नहीं है।

गिनती के कुछ लोगों की जेबें भर रही हैं किन्तु पर्यावरण को कितना बड़ा खतरा पैदा किया जा रहा है, सोचकर पर्यावरणविदों का दिल काँप जाता है। खनन से उत्पन्न धूल से मुलायम किस्म के पौधों का दूरदृदूर तक नाश हो रहा है। जंगल, ज़मीन और जल सब नष्ट हो रहा है। जंगली जीवों के निरापद जीवन की तो दूरदृदूर तक कल्पना ही नहीं की जा सकती। यह कृष्ण पयपान कर रहा है किन्तु माँ यशोदा की तरह नहीं, राक्षसी पूतना की तरह।

संयोग की बात यह है कि अरावली के पर्यावरण संतुलन के लिए यह (पाश्चात्य संस्कृति) आयातित विकास की नीति ही दोषी है और इसके संतुलन के लिए रोना भी वही रो रही है किन्तु वह भी प्रदूषित तरीके से। पश्चिमी देश नारेबाजी से पर्यावरण को संतुलित कर रहे हैं। हरित क्रान्ति, श्वेत क्रान्ति, औद्योगिक क्रान्ति के नारों से पर्यावरण का नाश तो कर दिया किन्तु विश्व पर्यावरण वर्ष के नाम से पर्यावरण को संतुलित नहीं किया जा सकता। हो सकता है तो बस भौतिक विलासिता में जी रहे चुटकी भर अभिजात्य वर्गों की जीभ पर लोहे की लगाम लगाई जा सकती है।

कैसे? तो आइए सीखिए अरावली के आदिवासियों से। पर्यावरण के सरकारी संरक्षण के चलते वे भी जंगल काटने लगे थे किन्तु तरुण भारत संघ ने ज़रासा रास्ता दिखाया और वे सबसे बड़े पर्यावरण संरक्षक हो गए। अवैध खनिक को कौन रोकेगा? अवैध कहकर रोकेंगे तो सरकार को रिश्वत देकर लाइसेंस बनवा लेंगे।

सरकार ईमानदार रही तो हज़ारोंदृलाखों मजदूरों की रोज़ी के सवाल पर अदालत से 20 नवंबर 2025 का आदेश प्राप्त कर लिया।

तब आप कहोगे ऐसे शैतान साँप का, पर्यावरण के भक्षक का फन कुचल दो। पराजित पाश्चात्य सभ्यता खून–खराबा ही तो करती है। लेकिन नहीं, आइए सनातनी सभ्यता आपको रास्ता दिखाएगी। सरिस्का के आदिवासियों से पूछिए ये आदिवासी सरिस्का में अवैध खदान रोकने के लिए, पर्यावरण संरक्षण के लिए भर्तहरि में एक यज्ञ करने जा रहे हैं।

"धर्मो रक्षति रक्षितः"

आप धर्म की रक्षा कीजिए, धर्म आपकी रक्षा करेगा। यह धर्म, हिन्दू, मुसलमान और ईसाई का धर्म नहीं है। सनातन धर्म है। पदार्थों का अपना स्वाभाविक प्राकृतिक धारण करने योग्य स्वभाव ही धर्म है जैसे सूर्य का ताप, चन्द्रमा की शीतलता, धरती की उर्वरा, पानी की तरलता उसका धर्म है। लेकिन पानी का बाजारीकरण और निजीकरण हेतु अप्राकृतिक बना देना अधर्म है। अतः पदार्थों (महाभूतों) को उनके स्वाभाविक स्वभाव से समाप्त कर देना ही अधर्म है।

सरिस्का के आदिवासी इसी धर्म के हथियार की खोज और सृजन के लिए सरकारी–असरकारी अपने साथियों के साथ यज्ञ के बहाने संगम कर अवैध खनन के खिलाफ धर्मयुद्ध की रणनीति तय करेंगे।

11. अरावली भूगर्भीय श्रृंखला को बचाने हेतु पर्यावरण यज्ञ

हमारे वन विभाग एक लिखे–लिखाए कानून पर काम करता है। यदि एक कानून जंगल संरक्षण में नाकाम रहा, तो उसकी सहायता के लिए दूसरा कानून बना दिया गया। इन दोनों ही तरह के कानून बनाने वालों ने जंगल की परम्पराओं, वनवासियों की मान्यताओं का ज्ञान कभी नहीं किया। ये भारत की मूल प्रकृति और संस्कृति के योग से बहुत दूर हैं। इसलिए आज बाढ़ ही खेत को खाने लगी है। जो विभाग जंगल, पहाड़ बचाने हेतु बना, वही अब उच्चतम न्यायालय में खनन करवाने के लिए वातावरण बना रहा है।

ऐसी स्थिति में वनवासी तथा वन्यजीवी प्राणी पर यह कानून लदा हुआ लगता है। साथ ही इन कानूनों के चलते वनवासी और वन के अन्तर सम्बन्ध समाप्त हो गए। "वनराज" अब सिंह नहीं, बल्कि वन विभाग का चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी है। और वह पशुओं का ही नहीं, पेड़ का, पहाड़ का, बाघ, हिरन का, वनवासियों और इस सबके साथ पर्यावरण, जंगली संस्कृति और सभ्यता का भक्षण कर रहा है। और इस व्यवस्था के चलते वनवासियों का उनके अपने जंगल से मोह खत्म हो गया था, रिश्ते टूट गए थे। उनका अपना अब पराया हो गया था।

वनवासी अपने आसपास के जंगल, पहाड़, जलस्रोत, जंगली पशु–पक्षियों को अलग–अलग नहीं देखता, वह सबकोकृसबके जीवन और रहन–सहन को अपने साथ रखकर एक साथ देखता है। और यही है पर्यावरण का स्वास्थ्य। वनवासी अपने पर्यावरण के सारे अवयवों को अपने आध्यात्म के साथ जोड़कर अपनी पूजा का केन्द्र मानता है। अरावली उसका पूजा क्षेत्र है। प्रत्येक पहाड़ी उसकी देवता है। बड़ी राक्षसी मशीनों से उन्हें उसी के सामने काटा जाता है, वह चुपके से उसे देख रहा है। वर्षों के खनन से वह लाचार, बेकार, बीमार बना दिया गया है।

वनवासी अपने आसपास के पेड़ों की यदि पूजा–अर्चना करता है तो साथ ही वह यह भी ख्याल रखता है कि तालाब के बहाव क्षेत्र में वह शौच आदि न करें। वह अपने विभिन्न तीज–त्यौहारों में विभिन्न वृक्षों, पशु–पक्षियों की पूजा–अर्चना करता है, जिन पर उसका जीवन निर्भर करता है। अब खनन के कारण उन सबसे रिश्ता टूटेगा।

शासन और प्रशासन की उल्टी नीतियों के चलते वनवासी के आध्यात्म को निरन्तर गहरी चोट लगती रही। उसकी निगाह के सामने उसकी लाचारी में उसकी पूजा की वस्तु नष्ट की जाती रहीकृकभी उसके राजा के द्वारा, कभी उसके मालिक के द्वारा, कभी उसके मंत्री के द्वारा, सांसद–विधायकों के द्वारा और कभी वन–खनन के द्वारा। अतः ऐसी स्थिति में उसका अपना मानस, अपना आध्यात्म बदला जाना स्वाभाविक है। आज वह अपनी संस्कृति–प्रकृति जीवन के बीच जूझ रहा है।

इसी प्रकार वह जंगल का दुश्मन हो गया, उसका भक्षक हो गया, यह कहना तो बेमानी है। किन्तु वह जंगल का, अपने पर्यावरण का हमदर्द नहीं रहा, उसका रिश्तेदार नहीं रहा, उसका पुजारी नहीं रहा, यह खनन करने वाले दिखाते हैं।

लेकिन तरुण भारत संघ ने जब इन्हें बिना पढ़े–लिखे, किन्तु ज्ञानवान वनवासियों से अकेलेपन की पुरानी रीति–नीति सीखना शुरू किया तो उसी वनवासी का अपना सोया आत्मविश्वास जागा, आध्यात्मिक बल जागा। जो कुछ खो गया था, उसे कुछ तो आपसी सहभागिता से और कुछ तरुण भारत संघ के प्रयासों से खोज निकाला। सरिस्का में खनन बंद करने में सफल हुए हैं। अरावली क्षेत्र में फैले कुछ गांवों में जंगल संरक्षण, पर्यावरण संरक्षण हेतु साझा काम चालू हो गया।

हाँ, उस कहानी का एक उदाहरण अवश्य देखा जा सकता है और वह है "पर्यावरण संरक्षण यज्ञ"। यज्ञ कराने का निर्णय तरुण भारत संघ का नहीं है, बल्कि अरावली के सैकड़ों गांवों के वनवासियों का है, जो गत 7 दिसंबर 2025 को लिए गए एक फैसले का अंश है। गत 7 दिसंबर को अरावली के साथ हो रहे अन्याय के खिलाफ एक साथ बैठने आए। धरने में 'जिंदाबाद–मुर्दाबाद' के नारे नहीं लग रहे थे, वरन् पर्यावरण संरक्षण के लिए चिंता की जा रही थी। और उसी बीच एक वृद्ध वनवासी का प्रस्ताव था कि "अपने अरावली को बढ़ाने के लिए हम 'यज्ञ' क्यों न करें?"

ज्ञान और पर्यावरण की देवी मां सरस्वती के जन्मदिन वसंत पंचमी को इस यज्ञ की पूर्णाहुति उन्हीं वनवासियों ने तय की है। यज्ञ की रीति–नीति बस वही पुरानी 'त्यागकर' जीना है, प्रकृति का संरक्षण–रक्षण करना है।

इस सवाल के जवाब हेतु यज्ञ का प्रस्ताव करने वाले वृद्ध वनवासी से मिलकर जान सकते हैं। उसके मस्तिष्क में भी भारत और उसकी परम्पराओं का चिंतन स्पष्ट है। वर्षा के लिए, अच्छे वातावरण के लिए, पुत्र और धन–धान्य के लिए ऋषिकुल भारत में यज्ञ की परम्परा पुरानी है। यज्ञ त्याग कर ग्रहण करना है। खान मालिकों को यह सीखने के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं है। इससे हमारी सरकार को भी सीख मिलेगी।

किन्तु यह यज्ञ अग्नि–कुण्ड को शाकल्य अर्पण मात्र नहीं है। वनवासियों, आदिवासियों, अनपढ़ किन्तु ज्ञानियों द्वारा किया जाने वाला यह यज्ञ वही है जिसका वर्णन ऋग्वेद की संहिता पर्व में है। एक ही लक्ष्य, एक ही संकल्पना के लोग एकत्र होंगे। साथ रहेंगे, साथ खाएंगे और साथ विचार करेंगे। साथ ही यज्ञ का अवलंब हमारी परम्पराओं के प्रति बद्धता प्रमाणित करेगा। और इस सहभाग से अरावली का जंगल, पर्यावरण बचाने की नयी दिशा निकलेगी। ऐसे सुंदर और नैसर्गिक वातावरण में जंगलों में छिपे, दबे, पिछड़े गाँवों से निकलकर विश्व–वंद्य भारत का सनातनी ज्ञान आयातित (तथाकथित विकसित) ज्ञान से मुलाकात करेगा। पहाड़ों को

कमाई के नाम पर काटना कोई विकास नहीं है। हम लाभ से पहले शुभ का ख्याल रखते हैं। आज का विकास तो केवल लाभ के लिए सोचता है।

अरावली में आज भी गहरे महत्व का "यज्ञ" इस समागम का एक माध्यम रहेगा, एक आधार रहेगा। इसलिए गाँव का आदिवासी इस महासम्मेलन में अपना सहकार नहीं, सहभाग महसूस करेगा। और तब वह खान मालिकों के लिए खिलौना नहीं, महत्वपूर्ण साथी रहेगा। और तब उल्टी बह चली गंगा सीधी बहेगी, वह गंगोत्री से ही निकलकर बंगाल की खाड़ी में ही गिरेगी। अर्थात अरावली का खनन से विनाश रुकेगा। अरावली में खनन नहीं, हरी–भरी बनाने की परियोजना चलेगी।

"पर्यावरण संरक्षण यज्ञ" नाम से ज्ञान के इस महासंगम में वनवासी ज्ञान को संरक्षण और आयातित ज्ञान को आवश्यक नियन्त्रण देकर पर्यावरण संरक्षण के लिए एक साझी रणनीति तैयार कर एक अभिनव जंगल कानून बनाने का भी प्रयास सफल हो सकता है। बशर्ते सरकार एक खुले मत से इसमें सहभागिता निभाए। न्यायपालिका भी भारतीय मूल ज्ञान–तंत्र से न्याय करना सीखेगी।

इस महायज्ञ में यह भी प्रमाणित होगा कि जंगल संरक्षण के लिए "रणथम्भोर–सरिस्का बाघ परियोजना" में कोर क्षेत्र–बफर क्षेत्र ज्यादा कारगर होगा या धराड़ी, कांकड़–बनी, रक्खत–बनी जैसी प्राचीन परंपराएं, जो राजस्थान की अरावली में प्रचलित पवित्र वनखंड (ओराण या सेक्रेड ग्रोव्स) हैं, जहां देवताओं या पूर्वजों का वास मानकर पेड़ काटना, शिकार करना पूरी तरह वर्जित है। ये परंपराएं छोटी–छोटी पहाड़ियों को भी पूरी तरह सुरक्षित रखती हैं, जो थार की रेत को रोकने का आधार हैं, जैव विविधता और जलस्रोतों की रक्षा करती हैं, और सामुदायिक नियमों से पीढ़ियों से चली आ रही हैं।

पर्यावरण यज्ञ से वातावरण में किए गए चिंतन से पर्यावरण संरक्षण के लिए जो भी "नियम–उपनियम" बनेंगे उनके परिणाम शाश्वत ही होंगे। तब यह गुंजाइश नहीं रहेगी कि 100 मीटर ऊँची पहाड़ियां ही बचाना जरुरी है। तब तो पूरी अरावली पर्वतमाला, जो गरीब आदिवासियों–वनवासियों की जीवन–रेखा है, उसे खान मालिकों के लिए ही खोद दिया जाए! यह यज्ञ त्याग कर ग्रहण करने की सीख सभी को देगा।

न्यायपालिका भारतीय ज्ञान–तंत्र का सम्मान करना सीखेगी। उसी के अनुरूप न्याय करेगी। सरकार भी आदिवासियों को भारत का सम्मान, नागरिकता का हकदार मानेगी। भारत समता प्रदान करने वाले संविधान से चलता है। आदिवासियों को समता की तरफ लाने हेतु उनके विस्थापन, जंगल के विनाश को रोककर उनके घरों को संरक्षित करेगी। अरावली बच जाएगी। यह अरावली के वनवासी अपने आपको बचाने हेतु पर्यावरण यज्ञ कर रहे हैं।

12. अरावली या रेगिस्तान? फैसला आज हमारे हाथ में

अरावली पर मंडराता खतरा

हमें जन्म देने वाली स्त्री और नदियों को जन्म देने वाली अरावली पर्वतमाला हमारी माँ है। दुनिया की प्राचीनतम आड़ी पर्वतमाला, 692 किलोमीटर लंबी भारत की रीढ़, को बचाने का प्रयास करें तो पूरी दुनिया उसे बचाने में हमारे साथ आ सकती है। इसे हरा–भरा बनाने में जापान ने भारत सरकार को बहुत मदद की थी। दुनिया के बहुत से देशों ने अपनी विरासत खोई है; भारत अपनी विरासत के प्रति जागरूक देश है। यही संस्कृति–प्रकृति का बहुत गहरा योग था। इसकी गहराई में केवल मानव और इसे बनाने वाले पंचमहाभूत (भ+ग+व+अ+न, भूमि, गगन, वायु, अग्नि और नीर) के योग के सिद्धांत की पालन–प्रणाली थी।

सृष्टि को चलाने वाले भगवान ही प्रकृति हैं और मानवीय व्यवहार ही संस्कृति है। भगवान प्रकृति और मानव व्यवहार संस्कृति ही हैं। इसी मान्यता ने हमारी पर्वतमाला अरावली को अभी तक कुछ सीमा तक बचाए रखा है। यही भारतीय आस्था, भारत की प्रकृति–संस्कृति के योग से, पर्यावरण संरक्षण बनाए रखती आई है; जबकि दुनिया में ऐसी बहुत सी घटनाएँ हुई हैं जहाँ विकास के नाम पर भारत से अधिक विनाश हुआ है। अब भारत में लालची विकास की गति तेज हो गई है।

विकास के नाम पर ऐसे विनाश मैंने देखे हैं, जैसे अमेरिका, कैलिफ़ोर्निया की ओंस वैली की पहाड़ियाँ, अफ्रीका और मध्य एशिया। भारत, बांग्लादेश, पाकिस्तान में इस प्रकार के दुष्प्रभावों के शिकार बने बहुत से पहाड़ हमारे सामने हैं। अब अरावली भी ऐसा ही नया क्षेत्र बनेगा। अरावली का दर्द बड़ा है; इसे पहचानें। अरावली का दर्द हम अपना दर्द मानते हैं। अरावली का दर्द हमारे लिए रह गया दर्द है। लालची उद्यमियों द्वारा दिया गया अरावली का दर्द हमारे जीवन की साँसों का संकट बनेगा। पर्यावरण–प्रदूषण और खनन द्वारा हमारे स्वास्थ्य–सुरक्षा को नष्ट कर देगा। भूजल–भंडार बिगड़ेंगे तो हमारी नदियाँ मरेंगी, सूखेंगी।

तरुण भारत संघ ने अरावली को बचाने की आवाज सबसे पहले 1980 में जयपुर में बैठक करके झालना डूंगरी के खनन को रोकवाने हेतु उठाई थी। वर्ष 1988 में "नीलकंठेश्वर" सरिस्का के जंगल में बैठकर उच्चतम न्यायालय में जाकर खनन रोकवाने हेतु याचिका दायर करने की तैयारी हुई थी। वर्ष 1991 में अरावली में हो रहे खनन के खिलाफ उच्चतम न्यायालय में जनहित याचिका निर्णय से खनन रुकना शुरू हुआ था। उस जमाने में पूर्व न्यायमूर्ति श्री वेंकटचलैया, पूर्व मुख्य न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय भारत, ने इस केस की सुनवाई बहुत गंभीरता से ली थी। उन्होंने सरिस्का की 478 खदानों को बंद करने का आदेश दिया था।

धीरे–धीरे यह मांग अरावली के चारों राज्यों में फैल गई। 2 अक्टूबर 1993 को हिम्मतनगर, गुजरात से अरावली का सिंहनाद करते हुए यह यात्रा 22 नवम्बर को दिल्ली संसद पहुँची थी। वहाँ संसद अध्यक्ष शिवराज पाटिल को ज्ञापन दिया गया था कि भारत सरकार के नोटिफिकेशन के बावजूद अवैध खदानें चल रही हैं।

अरावली सीधी दरारों वाली पर्वतमाला है। यह वर्षा–जल से भूजल–भंडार का पुनर्भरण करती है। इसी अरावली के गुण–स्वरूप, मैंने पिछले 50 वर्षों में 23 नदियों को शुद्ध, सदानीरा और पुनः जीवित कर पाया हूँ। खनन बंद होने पर मुझे यह सफलता मिली है कि अरवरी, भगाणी, सरसा, शेरनी, जहाजवाली, महेश्वरा जैसी नदियाँ पुनः पुनर्जीवित बन सकी हैं।

अब पूरी अरावली में खनन होगा तो इसकी सभी नदियाँ सूखेंगी। नदियाँ सूखना अर्थात सभ्यता का मरना। अरावली की सभ्यता को जिंदा रखने का दर्द अरावली को होगा। अरावली के लोगों को पेयजल संकट का सामना करना होगा। अरावली के चारे, ईंधन, अन्न का संकट बढ़ेगा। खनन के मलबे से खेती पर बहुत बुरा असर होगा। इस क्षेत्र को अनेक संकटों का सामना करना पड़ेगा।

खनन जंगली जीवों के आवास, उनके सहवास–स्थल तथा गलियारे (कॉरिडोर) को नष्ट कर देता है। जैव–विविधता का संकट बढ़ेगा। एक तरफ जिन जंगलों और जंगली जीवों को बढ़ाने पर हमारा करोड़ों खर्च हो रहा है, वहीं हम खनन द्वारा उन्हें नष्ट करने की तैयारी कर रहे हैं। अरावली की जड़ी–बूटियाँ खनन से समाप्त होंगी। अरावली का आरोग्य–रक्षण संकट में पड़ेगा। अरावली का नंगा होना तापमान बढ़ा देगा; जलवायु–परिवर्तन की आपदा आएगी। बेमौसम वर्षा से हमारा सब कुछ प्रभावित होगा। ये सभी संकट अरावली में खनन के कारण देखे जा सकते हैं।

खनन रुकने से 35 वर्ष में जलवायु–परिवर्तन अनुकूलन और उन्मूलन का यह उदाहरण केवल भारत ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया में अकेला है।

सर्दियों की मंद रोशनी में अरावली की पहाड़ियाँ दूर तक फैली हुई दिखती हैं, चट्टानों की अनगढ़ परतें, कहीं विरल पेड़ों के धब्बे और कहीं ऐसे ढलान जिनकी सतह पर बीते वर्षों में खो चुकी हरियाली की स्मृति अब भी जमी हुई है। अरावली के गर्भ से सैकड़ों नदियों का जन्म हुआ है, जो खनन एवं जल–शोषण के कारण सूख गई थीं। तरुण भारत संघ ने पिछले 50 वर्षों में दर्जनों नदियों को पुनर्जीवित किया है। जब नदियाँ सूखती हैं, तभी सभ्यता और संस्कृति भी कमजोर पड़ने लगती है। हमारी सभ्यता, संस्कृति और सरिता का बहुत गहरा संबंध है। इसी संबंध के कारण नर से निर्मित नारी और नदी को एक ही माना गया है।

समुद्र के खारे जल को सूर्य वशीकृत करके भाप (गैस) बनाता है। बादल भी जल के गैस–रूप ही हैं। बादलों को पुनः जल में बदलने का काम भारत की रेतली अरावली करती है, जो कि एकमात्र आदि पर्वतश्रेणी है। यह बंगाल की खाड़ी और अरब सागर से आने वाले बादलों के सामने आड़ी खड़ी होकर उन्हें वर्षा में परिवर्तित करती है। अरावली भारत के ब्रह्मा–रूपी भगवान मानी गई है, इसलिए भारत के ऋषियों ने अरावली के मध्य पुष्कर में ब्रह्मा सरोवर और ब्रह्मा मंदिर बनाया था। यह पूरे भारत में एकमात्र ब्रह्मा मंदिर है।

राजस्थान में जहाँ बादल उठते थे, वहीं अरावली के जंगल उन्हें बरसाते थे। खनन के कारण अरावली का तापमान 3 से 5 डिग्री तक बढ़ जाता है। पहले जयपुर की झालाना डूंगरी में खनन के कारण दोपहर बाद, जयपुर के अन्य हिस्सों की तुलना में, वहाँ का तापमान 1 से 3 डिग्री अधिक रहता था। सर्दियों में भी झालाना का तापमान जयपुर से अलग रहता था।

पर आज अब इन पहाड़ियों के बीच बसे गांवों में एक हलचल, एक सूक्ष्म–सी बेचैनी फैली हुई है। 20 नवंबर 2025 को उच्चतम न्यायालय की संपूर्ण पीठ का निर्णय आया है, जिससे अरावली के आँसू पोंछने की ज़िम्मेदारी अब केंद्र सरकार के पर्यावरण मंत्रालय को दी गई है। लेकिन इनके एफिडेविट और टिप्पणियों ने हमारी शंकाएँ बढ़ा दी हैं।

अरावली एक ही पर्वतमाला है। उसे ऊंच–नीच में बाँटकर नष्ट करने की स्पष्ट योजना दिख रही है। इसके पीछे शक्तिशाली खनन उद्योगपति ही हैं। अरावली विखंडित नहीं है। यह धरती माँ के गर्भ से निकली एक समग्र पर्वतमाला है। मां के गर्भ से निकला एक ही शरीर का आड़ा पहाड़ अरावली ही है। उसे बड़ा–छोटा कहकर परिभाषित नहीं किया जा सकता।

सर्वोच्च न्यायालय की ओर से लाई गई अरावली की नई परिभाषा को लोग केवल एक कानूनी परिवर्तन के रूप में नहीं देख रहे, उन्हें लगता है कि यह बदलाव उस प्राकृतिक ढांचे को छू रहा है, जिसे वे पीढ़ियों से अपनी जिंदगी, अपने जल–स्रोतों और अपनी धरती की सांसों की तरह जानते आए हैं।

अरावली को हमेशा अपने सम्पूर्ण, जैविक रूप में ही समझा जा सकता है। यह सिर्फ एक भूगोल या ऊँचाई–ढलान की रेखा नहीं है; यह उत्तर भारत के जल–चरित्र, जलवायु, वर्षा–चक्र और मिट्टी की स्थिरता का अनकहा ढांचा है। इसकी हर परत में भूगर्भीय इतिहास बसा है। कहीं जल के भूमिगत मार्ग, कहीं चट्टान की दरारों से सीपता हुआ नमी का संसार, कहीं सूक्ष्म जीवों का वह तंत्र जो मिट्टी को पकड़ कर रखता है और कहीं वे पत्थरीले विस्तार जो दिखने में बंजर लगते हैं मगर स्थानीय जलसंतुलन की रीढ़ होते हैं। जब किसी परिभाषा में इन सभी पहलुओं को शामिल नहीं किया जाता, तो वह प्राकृतिक सत्य को सीमित कर देती है और आगे आने वाली पीढ़ियों पर उसका बोझ पड़ता है।

कानूनी ढांचे में कई असंगतियाँ उभरती दिखाई देती हैं। नई परिभाषा यदि मौजूदा पर्यावरण संरक्षण अधिनियमों, वन कानूनों और संवेदनशील पारिस्थितिक क्षेत्रों से जुड़े दिशा–निर्देशों से मेल नहीं खाती, तो आने वाले समय में न्यायालयों, प्रशासन और स्थानीय समुदायों के बीच नए विवाद पैदा होंगे। यह आवश्यक है कि किसी भी परिभाषा को लागू करने से पहले उसे वैज्ञानिक समुदाय, पर्यावरण विशेषज्ञों, स्थानीय समाज और जल–वैज्ञानिकों की सामूहिक समीक्षा से गुजारा जाए। ऐसे संक्रमणकाल में सबसे महत्त्वपूर्ण कदम एक ऐसी वैज्ञानिक और सामाजिक समिति का गठन है जिसमें भू–वैज्ञानिक, जल–विशेषज्ञ, पारिस्थितिकीविद, स्थानीय समुदायों के प्रतिनिधि और नीति–निर्माता मिलकर अरावली की वास्तविक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक परिभाषा तय करें। केवल परिभाषा बदल देने से प्रकृति सुरक्षित नहीं होती; उसकी सुरक्षा उस दृष्टिकोण से आती है जिसमें प्रकृति को उसकी संपूर्णता में पहचाना जाए।

अरावली को परिभाषित करने के लिए वैज्ञानिक मानकीकरण, भूगर्भीय साक्ष्य, पारिस्थितिकी–आधारित वर्गीकरण और जलगतिकी का अध्ययन अनिवार्य था, लेकिन जो स्वरूप सामने आया, वह तकनीकी शब्दावली की एक संकुचित व्याख्या जैसा है। इसकी वजह से वे क्षेत्र, जो अरावली की पारिस्थितिकी का अनिवार्य हिस्सा हैं पर सतह पर चट्टानी ऊँचाई की तरह नहीं दिखते, संरक्षण के दायरे से बाहर किए जा सकते हैं। यह स्थिति अत्यंत खतरनाक है, क्योंकि प्रकृति को सिर्फ ऊपर से देखने भर से उसकी पूरी संरचना नहीं समझी जा सकती।

नई परिभाषा को लेकर चिंता की जड़ें इसी अधूरेपन में छिपी हैं। नई परिभाषा से खनन, रियल एस्टेट विस्तार और शहरी फैलाव को अनपेक्षित बढ़ावा मिलने की आशंका वास्तविक है। कई ऐसे क्षेत्र, जो अब तक पर्यावरणीय कानूनों के संरक्षण में थे, यदि अरावली की परिभाषा से बाहर कर दिए जाते हैं, तो वे न केवल 'असुरक्षित क्षेत्र' बनेंगे बल्कि कुछ मामलों में अवैध गतिविधियों को एक तरह की कानूनी वैधता भी मिल सकती है। इससे केवल स्थानीय पर्यावरण ही नहीं, बल्कि पूरे उत्तरी भारत की जलसुरक्षा पर असर पड़ेगा। दक्षिण–पश्चिमी हवाओं से उत्पन्न गर्मी का दबाव बढ़ेगा, वर्षा चक्र प्रभावित होंगे और दिल्ली–एनसीआर जैसे क्षेत्रों में हवा की गुणवत्ता और गिर सकती है। यदि यह प्रवृत्ति अगले कुछ दशकों तक जारी रही, तो आने वाले 50 से 100 वर्षों में उत्तर भारत गंभीर पारिस्थितिक संकट का सामना कर सकता है। 20 नवंबर 2025 को उच्चतम न्यायालय की पीठ का निर्णय इस संकट को और गंभीर बना देता है।

अरावली को केवल पर्यावरण नहीं बल्कि सांस्कृतिक विरासत के रूप में भी समझना चाहिए। यहां के समुदायों ने सदियों से जल–प्रबंधन की पारंपरिक प्रणालियाँ, वन–आधारित आजीविका और पशुपालन की पद्धतियाँ विकसित की हैं। यह ज्ञान किसी किताब का नहीं बल्कि अनुभव का है, एक ऐसा अनुभव जो बताता है कि चट्टानों की खामोश परतें भी पानी को कैसे थामती हैं, और किस प्रकार सूखे मौसम में पहाड़ी की तरफ़ से आती हल्की हवा भी जीवन की निशानी होती है। जब परिभाषाएँ इस सांस्कृतिक–प्राकृतिक संबंध को संबोधित नहीं करतीं, तो वे अधूरी रह जाती हैं।

अरावली पर जब शाम उतरती है, तो पहाड़ियों के बीच बहती हवा में जीवन की मद्धिम–सी अनुभूति रहती है। यह हवा बताती है कि प्रकृति अब भी संकेत देती है, संकेत कि उसकी संरचना को समझा जाए, उसका सम्मान किया जाए और उसे उसके वास्तविक स्वरूप में पहचाना जाए। यही वह क्षण है जब निर्णय केवल कागज़ पर नहीं, बल्कि जमीन पर रहने वाली उन असंख्य ज़िंदगियों के साथ संवाद में लिया जाना चाहिए जिनकी दुनिया अरावली की सांसों से चलती है। प्रकृति की रक्षा किसी कानूनी शब्दावली से नहीं, बल्कि उसके भीतर बसे जीवन की समझ से होती है। अरावली इसी समझ की सबसे पुरानी, सबसे विवेकपूर्ण शिक्षक है, इसे संकुचित परिभाषाओं से नहीं, बल्कि उसके सम्पूर्ण सत्य के साथ सुरक्षित रखना ही भविष्य की सबसे बड़ी जिम्मेदारी है।

अरावली का खनन अरावली की उपजाऊ भूमि को रेगिस्तान में बदलेगा। दिल्ली, हरियाणा, पश्चिम उत्तर प्रदेश तथा पंजाब में भी रेगिस्तान का विस्तार होगा। इस विषय में बिरला साइंस इंस्टिट्यूट, जयपुर के निदेशक प्रोफेसर एस एस प्रोफेसर डाबरिया की बहुत विस्तृत रिपोर्ट के अनुसार अरावली में 22 गैप हैं। हमने 1992 में उच्चतम न्यायालय को यह रिपोर्ट दी थी। तभी उच्चतम न्यायालय ने भारत सरकार को अरावली पर्वतमाला को संवेदनशील पर्वतमाला घोषित कराया था। अब पुनः इसे खोला जाने की सम्भावनाएँ बढ़ गई हैं। ऐसा हुआ तो फिर रेगिस्तान बढ़ने से पूरे भारत का दर्द बढ़ेगा।

अरावली भारत की विरासत है। भारत को पूरी दुनिया कहेगी कि भारत अपनी विरासत को बचाने में सक्षम नहीं है; उसने अपनी पहचानकृअरावलीकृको नष्ट करवा दिया है। यही अरावली का सबसे गहरा घाव और दर्द पूरे भारत को पीड़ित करेगा।

क्या आज का लोकतंत्र पहाड़, नदी सभी खनन उद्यमियों के बस में ही है? भारत के प्रधानमंत्री कॉप–15, कॉप–30 में क्या बोलकर आए हैं? उनके किए वादों की उद्यमियों के मन में कोई कीमत है? लोगों का विश्वास सरकार और खनन लॉबी के इस गठजोड़ से टूट रहा है। इसलिए आज हम सभी संगठित आवाज देकर अरावली विरासत को बचाएँ। खनन अरावली की प्रकृति और संस्कृति दोनों के विरुद्ध है। इससे हमारी पारिस्थितिकी बिगड़ती है। हाँ, कुछ खनन–मालिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार होता है, परंतु अधिकतर

लोगों को सिलिकोसिस जैसी भयानक बीमारियाँ हो जाती हैं, जिससे उनका स्वास्थ्य बिगड़ता है और फिर बीमारी के कारण आर्थिक स्थिति भी खराब होने लगती है।

अरावली की हरियाली ही हमारी अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी का आधार है। जैसे हमारे शरीर का आधार हमारी रीढ़ है, वैसे ही अरावली भारत की रीढ़ है, इसलिए इसकी सुरक्षा आवश्यक है। अरावली को खनन–मुक्त करना ही भारत की समृद्धि का मार्ग है। समृद्धि केवल आर्थिक ढाँचा ही नहीं है; हमारे जीवन–ज्ञान और जीवनविद्या ने हमें 200 वर्ष पूर्व तक 32þ जीडीपी तक पहुँचाया था, तब भारत में बड़े पैमाने पर खनन नहीं था। हमारी खेती, संस्कृति और प्रकृति ने ही हमें समृद्ध बनाए रखा था।

अरावली के मूल आदिवासी भी अब खास खनन सामग्री निकालने हेतु हटाए जा सकते हैं। वन्यजीवों की तो बात ही क्या? वन–औषधियों की क्या अहमियत? गांवों के लोग इस बदलाव को अपने रोज़मर्रा के अनुभव से तौलते हैं। कभी पहाड़ी की हरियाली वर्षा को थाम लेती थी और महीने भर तक खेतों में नमी बनी रहती थी। अब वे दिन उन्हें फिर से धुंधले होते नज़र आ रहे हैं, कुएँ सूख रहे हैं, चारे की उपलब्धता घटती जा रही है और जलस्रोतों का प्रवाह टूट रहा है। जब परिभाषाओं के कारण पहाड़ी तंत्र का कोई हिस्सा कमजोर होता है, तो उसका असर सबसे पहले इन्हीं समुदायों पर पड़ता है जिनकी ज़िंदगी जल और मिट्टी से सीधे बंधी होती है।

अरावली को कटने मरने से बचाना है। खनन करके अरावली को नंगा करना, जंगल काटना और गैप बनाना बिल्कुल उचित नहीं है। अरावली की परिभाषा को इसी समग्रता से बनाना जरूरी है। 100 मीटर ऊंची ही अरावली है, यह ठीक नहीं है। पर्वतमाला एक ही होती है। मां के गर्भ से निकले पर्वत को गर्भ से लेकर चोटी तक उसके पूरे चरित्र सहित बचाना जरूरी हैकृउसके पेड़–पौधे, जीव–जंतु और उसकी खेती, वनोषधियाँ, आदिवासी, जंगलवासी समुदाय। सबसे पुराने आदिवासी समुदाय अरावली की चोटियों पर ही मिलते हैं। इन्हें बचाने के लिए कॉप–30 से हमारी सरकार एवं उच्चतम न्यायालय को सीख लेना चाहिए। कॉप के निर्णय सभी मानते हैं। हम भी एसडीजी, कॉप जो संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा पहाड़, पर्यावरण और लोगों को संरक्षण देने वाली प्रक्रिया हैकृउसे अपनाएँ। हमें लालची आर्थिक क्षेत्र के विकास, विस्थापन, बिगाड़, विनाश, प्रदूषण, अतिक्रमण, शोषण के नंगे नृत्य से सीख लेने की आवश्यकता है। नंगा नृत्य भारत में कहीं भी, किसी भी रूप में अच्छा नहीं माना जाता।

अरावली की समृद्धि का ढाँचा खनन में नहीं, बल्कि हरियाली में है। हरियाली से बादल रूठकर बिना बरसे कहीं और नहीं जाते; अरावली में ही अच्छी वर्षा करते हैं। वर्षा का पानी खेतों में खेती करने हेतु रोजगार के अवसर देता है। अरावली के जवानों को अरावली के जल के सहारे खेती–किसानी करने का अवसर मिलेगा।

गत दिवस, विश्व पर्वत दिवस 11 दिसंबर 2025 को, अरावली विरासत जन अभियान अरावली पर्वतमाला और इसकी संस्कृति, प्रकृति दोनों को बचाने हेतु खड़ा हुआ है। अरावली का प्रत्येक वनवासी, जीव जंतु, पेड़ पौधे, वन्यजीव सभी संकल्पित हो रहे हैं। आड़ा पहाड़ खुद भी अपने विरोधियों को रोकेगा। अब सरकार व खनन उद्यमियों पर भरोसा नहीं है। इसलिए अरावली के बेटे–बेटियों को संगठित होकर इसे बचाने का प्रयास तत्काल आरंभ करना होगा। तभी अरावली और दुनिया के पहाड़ बचेंगे। आड़ा पहाड़ अरावली विरासत जन अभियान चलाएंगे। आड़ा पहाड़ को कटने मरने से बचाएंगे।

13. अरावली की प्रचुरता पर संकट

वन–औषधियों का खजाना बचाओ

अरावली पर्वतमाला, जो दुनिया की सबसे प्राचीन पर्वत श्रृंखलाओं में से एक मानी जाती है, अपनी अपार और अनगिनत प्रचुरता के लिए सदियों से मानव जीवन को पोषित और समृद्ध करती आई है। इसके विशाल विस्तार में फैले घने जंगल, विविध प्रकार के वन्यजीव, और असंख्य औषधीय जड़ी–बूटियाँ एवं वनस्पतियाँ भारतीय संस्कृति, आयुर्वेद और सनातन जीवनशैली की मजबूत आधारशिला रही हैं।

इस पर्वतमाला के हृदय स्थल में स्थित सरिस्का और रणथम्भोर जैसे बाघ अभयारण्य न केवल वन्यजीवों के लिए सुरक्षित आश्रय हैं, बल्कि ये ऋषि–महर्षियों की प्राचीन साधना स्थली भी रहे हैं, जहाँ आज भी तीर्थ स्थल उनकी पुरानी कहानियाँ और आध्यात्मिक विरासत को जीवंत रखते हैं। यहाँ के आदिवासी वनवासी पहाड़ों, जंगलों और नदियों को अपना भगवान मानते हैं, और इनकी यह प्रचुरता उनकी दैनिक जीवनशैली, संस्कृति और अस्तित्व का अभिन्न अंग हैकृचाहे वह शक्तिशाली बाघ जैसे वन्य प्राणी हों या जीवनदायिनी वनौषधियाँ।

हमारा समूचा आयुर्विज्ञान इन वनों और वनौषधियों पर ही आधारित रहा है, जो छोटी–मोटी बीमारियों से लेकर दुनिया के सबसे असाध्य कहे जाने वाले रोगों तक का सफल इलाज सदियों से करते आए हैं। वैद्य आज भी गर्व से कहते हैं कि चिकित्सा विधा प्रयोगशालाओं का विषय नहीं, बल्कि जंगलों में साधना की विषय–वस्तु है। जब पाश्चात्य सभ्यता के लोग जंगलों में भेड़ें चरा रहे थे, तब यहाँ के सनातनी लोग वनों में मस्तिष्क की शल्य–चिकित्सा जैसे उन्नत कार्य कर रहे थे, यह सब अरावली के प्राचीनतम भारतीय ज्ञान और इसके जंगलों की अनुपम देन है। उन प्राचीन विज्ञानियों के वंशज आज भी इन जंगलों में विद्यमान हैं, पूरा पारंपरिक ज्ञान समेटे हुए। सरिस्का के हरिपुरा गाँव के नानगराम गुर्जर जैसे वनवासी बताते हैं कि चाहे रक्तस्राव कितना भी तेज क्यों न हो, रोखड़ी (सदाही) घास को कुचलकर लगाने मात्र से वह तुरंत बंद हो जाता है; बुखार के लिए सहदेवी और काली मिर्च का काढ़ा रामबाण औषधि है; साधारण खाँसी–जुकाम में तुलसी के पत्तों का काढ़ा पीकर और थोड़ा परहेज करके आराम मिल जाता है। गाँवों में लोग आज भी इन जड़ी–बूटियों पर पूरा विश्वास करते हैं क्योंकि वे इनसे ठीक हो जाते हैं। भील जैसी जातियों की महिलाएँ स्थानीय वनस्पतियों से परिवार–नियोजन तक का उपचार स्वयं कर लेती हैं, बिना किसी बाहरी खतरनाक दवा के।

अरावलीवासी "मोटो खाणों और मोटो पहनणों" के सिद्धांत में विश्वास रखते हैं, अर्थात अपनी स्थानीय उपलब्ध वस्तुओं का ही उपयोग करना, जिसमें किसी तरह की बाहरी बनावट या लग्ज़री न हो। शायद इसी लग्ज़री की होड़ ने हमें संकट में डाल दिया है, आज लोग गोरा बनने के चक्कर में तरह–तरह के रासायनिक प्रसाधन

लगाते हैं, जिससे चर्म रोग बढ़ते हैं, जबकि पारंपरिक तेल—उबटन से त्वचा सुरक्षित और शरीर हृष्ट—पुष्ट रहता था। सत्तानासी या कालो खेर की छाल का काढ़ा पीने से सभी चर्म रोग दूर हो जाते हैं; शरीर में सुस्ती या शुष्कता आने पर सरसों के तेल में लहसुन पकाकर मालिश करने से सब शिकायतें गायब हो जाती हैं। एलोपैथी के पास हृदय रोग और रक्तचाप की दवाएँ न होतीं यदि सर्वगंधा की जड़ न होतीकृपेटेंट दवा सर्वाइना उसी से बनी है; मलेरिया की कुनैन सिनकोना वृक्ष से आती है। लेकिन पाश्चात्य विधि से बनी इन दवाओं में कुप्रभाव भी आ जाते हैं, किन्तु स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम्। आतुरस्य विकार प्रशमनम् च।।

अरावली की वनौषधि से बनी कोई भी औषधि विकार तो पैदा ही नहीं कर सकती, जैसा कि इस श्लोक में दर्शाया गया है। रोगी को निरोग्य बनाने और निरोग को स्वास्थ्य लाभ देने वाली होती हैं ये वन—औषधियाँ।

वासानायाम, आशायाम जीवित्स्य च, रति पिति, क्षयी कासी, विमर्थन औषधिति।

उक्त श्लोक से स्पष्ट है कि वनौषधियों के उपयोग से तो क्या, यदि उस औषधि का वृक्ष भी पास में मौजूद है तो जीवन की आशा बँधती है। वट और पीपल के नीचे रात में सोना इसलिए वर्जित नहीं कि प्रेत रहते हैं, बल्कि रात्रि के समय वे अधिक कार्बनडाइऑक्साइड गैस छोड़ते हैं। तुलसी का पौधा आँगन में लगे होने मात्र से तमाम रोगों से मुक्ति मिलती रहती है। यह सारी पद्धतियाँ और ज्ञान अरावली के आदिवासी आज के आधुनिक चिकित्सा विज्ञान से कहीं अधिक गहराई से जानते हैं, यही कारण है कि वे कम बीमार पड़ते हैं और स्वयं ही इलाज कर लेते हैं।

कालान्तर में जब ऋषि परम्परा कुछ लुप्त—सी हो गई, तो अरावली साधना और आध्यात्म का केंद्र रहने के बजाय मानव के भौतिक सुखों और विलासिता का केन्द्र बनने लगी। यह क्षेत्र सांसदों, विधायकों, अधिकारियों और उद्योगपतियों की ऐशगाह तथा शिकारगाह बनकर रह गया। मानव ने अपनी वैचारिक विलासिता के चलते इसे कभी रूख क्षेत्र, कभी संरक्षित क्षेत्र, कभी अभयारण्य, कभी बाघ परियोजना, तो कभी राष्ट्रीय उद्यान का नाम दिया, लेकिन अब तो अरावली की मूल परिभाषा ही खनन के पक्ष में बदल दी गई है, और पूरी अरावली के 92þ क्षेत्र को खनन की पूरी छूट दे दी गई है। राजस्थान के अलवर, सवाई माधोपुर जैसे चर्चित जनपदों में सरिस्का और रणथम्भोर का यह क्षेत्र खनन के दर्द से कराह रहा है, और यह दर्द भारत भर के लोगों से जुड़ा हुआ है।

राष्ट्रीय उद्यान की परिभाषा को साकार बनाने के नाम पर सरिस्का—रणथम्भोर क्षेत्र में बसे गांवों को उजाड़कर बाहर बसाने के प्रयास हो रहे हैं, जबकि दूसरी ओर इनकी घाटियों और पहाड़ियों को डायनामाइट से विध्वंस किया जा रहा है। क्या मूल निवासियों को इन वन्यजीव क्षेत्रों से खदेड़कर, सरिस्का और रणथम्भोर का सीना चीरकर कभी ये परिभाषाएँ पूरी हो पाएंगी? जो लोग जंगल को केवल भौतिक आवश्यकताओं का केंद्र मानते

हैं, वे तो समर्थन करेंगे, लेकिन इससे पारिस्थितिकी संतुलन बिगड़ेगा, वन्य प्राणियों का स्वास्थ्य प्रभावित होगा, भारत की प्रकृति और संस्कृति का विध्वंस होगा, और अर्थव्यवस्था भी 32þ से गिरकर 6þ पर आ जाएगी। मानव अपनी प्रकृति और पर्यावरण के साथ नाजायज छेड़छाड़ करके खुद बीमारियाँ पैदा कर लेता है, जिन्हें सनातन भाषा में प्रकृति का प्रकोप या पापों का फल कहा जाता है। आयातित चिकित्सा से क्षणिक राहत मिलती है, लेकिन उसके परिणामस्वरूप कैंसर और सिलिकोसिस जैसी लाइलाज बीमारियाँ पाल लेते हैं, जो इसी अरावली के खनन से जन्मी हैं, यह हमारा आज का तथाकथित नया विकास है।

फिर भी, आशा की किरण बाकी है। बहुत–सी संस्थाएँ और लोग इन वन्यजीव क्षेत्रों पर जन दबाव कम करने के लिए जंगलों के बाहर प्रकृति पुनर्जनन का काम कर रहे हैं। जैसे तरुण भारत संघ ने गोपालपुरा में खेती और रोजगार के लिए वर्षा जल के उपयोग हेतु बाँध बनाए, जिसके परिणाम देखकर ग्रामीणों में उत्साह जागा, और सरिस्का–रणथम्भोर के आसपास थानागाजी, राजगढ़, अलवर, जयपुर, सवाई माधोपुर, करौली, धौलपुर, दौसा जैसे जिलों के 2000 गांवों में 15800 बाँध और तालाब बन गए।

लेकिन इन कार्यों में अलवर जिला प्रशासन, राजस्थान के सिंचाई विभाग और वन विभाग ने खूब अड़ंगे लगाए, रणथम्भोर में भी यही हुआ, जबकि सभी कार्य वन और वन्यजीवों के हित में ही थे। शिक्षा शुरू करने पर सरिस्का के निदेशक ने कहा कि गाँव अवैध हैं, इसलिए कोई सामाजिक कार्य की इजाजत नहीं, लेकिन बिना सरकारी मदद के काम चले। सिंचाई विभाग ने बाँध तोड़ने के आदेश दिए, अलवर प्रशासन ने हरा–भरा किया क्षेत्र फिर बसाने दिया। इन सबके बावजूद वनवासियों में चेतना जागी, उन्होंने जंगल, जानवर, पहाड़ और पर्यावरण बचाने की ठान ली। अनपढ़ कहे जाने वालों ने सिद्ध किया कि वे जंगल से प्यार करते हैं और संरक्षण की असली जिम्मेदारी उनकी है, खनन के खिलाफ सत्याग्रह करके रोका।

पर्यावरण संरक्षण समाज की मूलभूत आवश्यकता है, चाहे वातावरणीय, वैचारिक, बौद्धिक या भौतिक। सरकार प्रयास कर रही है, लेकिन विचारधारा के अभाव में परिणाम सीमित रह जाते हैं, कभी विपरीत कार्य भी हो जाते हैं जैसे उद्यान के बीच खनन लीज। समस्या पर्यावरण की परिभाषा में हैकृसरकारी परिभाषा केवल पहाड़, पेड़, जंगल, पानी तक सिमट गई, प्रकृति, संस्कृति और सभ्यता गायब। जंगलवासियों को खत्म करके खनन करना यदि सतत विकास है तो ऐसे विचारकों का सम्मान कैसे करें? वन विभाग वन्यजीव बचाने का दावा करता है लेकिन खनन करवाता है, परिभाषाएँ बदलवाता है। अरावलीवासी कहते हैं कि जंगलात को अधिकार बढ़े तो जंगल और पशु नष्ट हुए, संरक्षण की जगह भक्षण हुआ, रिश्ते टूट गए, जंगल सरकार का हो गया। अरण्य संस्कृति में खनन की विनाशक परिभाषा थोप दी गई। कोई विभाग संस्कृति या प्रकृति–संस्कृति के योग के लिए नहीं।

खनन छूट से सभी बीमार होंगे, कमाई से ज्यादा चिकित्सा पर खर्च, खान मालिक लाभ लेंगे लेकिन हानि अपूरणीय। अरावली का दर्द सुनें सरकार और न्यायालय, निर्णय बदलें। नहीं तो जनता को सत्याग्रह, संघर्ष और यज्ञ करना होगा। 35 वर्ष पहले सरिस्का वासियों ने पर्यावरण यज्ञ से खनन रोका था। अब नई पीढ़ी को खड़ा होना होगा।

14. अरावली की पीड़ाः कॉप30 बनाम सुप्रीम कोर्ट

ब्राजील कॉप30: पहाड़ों को बचाने की वैश्विक पहल

अरावली एक प्राचीन भूगर्भीय श्रृंखला है, जो गुजरात से दिल्ली तक 692 किमी में फैली हुई है। लोकभाषा में इसे 'आडा पर्वत' कहा जाता है। इसकी पीड़ा विश्व भर के पहाड़ों की साझा पीड़ा का प्रतीक है। जिन देशों में न्यायपालिका और लोकतांत्रिक सरकारें पहाड़ों तथा जंगलों की अनदेखी कर उन्हें नष्ट कर रही हैं, उनके लिए कॉप 30 जैसे वैश्विक मंच महत्वपूर्ण संदेश लेकर आए हैं।

20 नवंबर 2025 को ब्राजील के बेलेम में आयोजित कॉप30 ने जंगलों और पहाड़ों के संरक्षण पर मजबूत जोर दिया। इस सम्मेलन में वर्षावनों को धरती के "हरे फेफड़ों" के रूप में मान्यता देते हुए एक नए वैश्विक कोष की घोषणा की गई, जिसमें उपग्रह निगरानी के आधार पर जंगलों–पहाड़ों को बचाने वालों को पुरस्कार और अधिक कटाई करने वालों को दंड का प्रावधान है। आदिवासी हितों के लिए सारा पैसा सीधे आदिवासी संगठनों को देने का निर्णय लिया गया, ताकि कोई सरकार बीच में न रहे और आदिवासी स्वयं अपने पहाड़, जंगल तथा आवास बचाने के निर्णय लें। ब्राजील के राष्ट्रपति ने स्वयं अमेजन वर्षावनों तथा पहाड़ों को खनन से हुए भारी नुकसान के प्रमाण दुनिया के सामने रखे। इस नुकसान को प्रदर्शित करने के लिए ही कॉप30 को अमेजन जंगल के केंद्र बेलेम में आयोजित किया गया। जर्मनी ने दस वर्षों में एक अरब यूरो देने का वादा किया, नॉर्वे ने तीन अरब डॉलर तथा ब्राजील व इंडोनेशिया ने एक–एक अरब डॉलर का योगदान किया। ब्राजील का अनुमान है कि यह कोष आगे चलकर 125 अरब डॉलर तक पहुंच सकता है, जिसमें कम से कम 20 प्रतिशत धन आदिवासी तथा पारंपरिक समुदायों तक सीधे पहुंचेगा। लगभग 70 देशों को इससे लाभ मिल सकता है, और अब तक 53 देश इसका समर्थन कर चुके हैं। ब्राजील को उम्मीद है कि समृद्ध देश 25 अरब डॉलर की शुरुआती सहायता देंगे। ये सभी निर्णय पहाड़ों तथा उनके जंगलों को बचाने की दिशा में एक मजबूत वैश्विक प्रतिबद्धता दर्शाते हैं। हम इन निर्णयों का हार्दिक स्वागत करते हैं। अरावली के आदिवासियों का अब क्या होगा? यह सवाल विचारणीय है।

ठीक उसी दिन भारत के उच्चतम न्यायालय ने अरावली की परिभाषा पर एक महत्वपूर्ण निर्णय दिया। न्यायालय ने केंद्र सरकार की सिफारिश स्वीकार करते हुए अरावली को 100 मीटर ऊंचाई वाले भूभाग तक सीमित करने वाली परिभाषा को अपनाया। साथ ही, पूरे अरावली क्षेत्र के लिए सतत खनन प्रबंधन योजना तैयार करने का निर्देश दिया तथा तब तक नई खनन लीज न देने का आदेश जारी किया। अरावली में राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े महत्वपूर्ण खनिजों (एटमिक महत्व वाले) के लिए छूट दी गई है, लेकिन सामान्य खनिजों के लिए खनन की छूट एक ही उद्यमी को ध्यान में रखकर दी गई प्रतीत होती है। अरावली के लोगों की मान्यता है कि सामान्य

खनिजों के लिए अरावली को काटना, जंगल नष्ट करना और पर्वतमाला में नए घाव बनाना किसी भी रूप में उचित नहीं है।

यह विरोधाभास गहन चिंता का विषय हैः एक ओर वैश्विक स्तर पर पहाड़ों की रक्षा के लिए पुरस्कार–दंड की व्यवस्था तथा आदिवासियों को सशक्त बनाने के निर्णय, दूसरी ओर भारत में अरावली की परिभाषा को ऊंचाई के आधार पर संकुचित करना। यदि यह परिभाषा अरावली के निचले हिस्सों को खनन के लिए खोल देती है, तो जल संकट, जलवायु परिवर्तन तथा जैव विविधता पर गहरा असर पड़ सकता है। पूरी दुनिया मानती है कि पर्वतमालाएं धरती के गर्भ से निकलती हैं तथा उनकी पारिस्थितिकी एकसमान संरक्षण मांगती है। संपूर्ण भूभागकृचाहे धरती के भीतर हो या बाहरकृएक जैसा संरक्षण पाने का हकदार है। इसीलिए न्यायालय ने अरावली के 100 मीटर ऊँचे हर हिस्से के लिए व्यवस्था बनाने का 6 माह का समय दिया है, लेकिन समय सीमा से पूर्व विचार करके अरावली को खनन–मुक्त रखना भारत की विरासत बचाने के लिए अधिक महत्वपूर्ण है।

न्यायालय ने पहले स्पष्ट कहा था कि अरावली को राज्यों की सीमाओं में बांटकर नहीं, बल्कि गुजरात से दिल्ली तक एक समग्र पर्वतमाला के रूप में देखा जाए। लेकिन 100 मीटर से नीचे के क्षेत्रों में खनन की संभावित छूट से स्वयं अरावली को टुकड़ों में बांटने का खतरा उत्पन्न हो गया है। यह निर्णय भारत तथा दुनिया की पर्वतमालाओं के लिए घातक साबित हो सकता है। हम सरकार तथा उच्चतम न्यायालय से विनम्र याचना करते हैं कि इस निर्णय पर पुनर्विचार करें। यदि ऐसा नहीं हुआ तो विश्व भर के पहाड़ों को बचाना कठिन हो जाएगा तथा भारत की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बदनामी हो सकती है। प्रकृति–संस्कृति की रक्षा करने वाले देश ने यदि अपने ही पहाड़ की प्रकृति तथा संस्कृति को नष्ट करने की पहल की, तो यह दुर्भाग्यपूर्ण होगा। भारत को अब तक के कॉप में प्रस्तुत पर्यावरण प्रतिबद्धताओं को भी मुड़कर देखना होगा। हम अपनी प्रकृति–संस्कृति के साथ संकल्प पूरे करके ही विश्वगुरु बन सकते हैं।

पर्यावरण चिंतकों ने लंबे समय से उच्चतम न्यायालय तथा विभिन्न राज्यों के उच्च न्यायालयों में अरावली बचाने की आवाज उठाई है। इन याचिकाओं से चारों राज्यों की अरावली का समग्र दर्शन सामने आया, जिससे हमें बड़ी प्रसन्नता हुई थी। न्यायालय ने पहले नई खनन लीज न देने का सम्माननीय निर्णय लिया था, जिससे अरावली के घाव भरने की उम्मीद जगी। लेकिन नई परिभाषा से उन घावों को और गहरा करने का खतरा पैदा हो गया है। अरावली के आंसू अब कभी थमेंगे? हमें गहन शंकाएं हैं, क्योंकि इस निर्णय के पीछे खनन उद्यमियों का सरकार पर गहरा प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। सरकार द्वारा न्यायालय में दिए गए एफिडेविट इसकी पुष्टि करते हैं। पूरी अरावली कुछ खनन उद्यमियों के हाथों सौंपने की योजना प्रतीत होती है।

यह निर्णय 1990 के दशक की याद दिलाता है, जब अरावली में वैध–अवैध 28 हजार से अधिक खदानें चल रही थीं। इन खदानों को बंद कराने के लिए तरुण भारत संघ की पहल पर जारी नोटिफिकेशन को लागू करवाने हेतु 2 अक्टूबर 1993 को हिम्मतनगर, गुजरात से दिल्ली तक पदयात्रा की गई थी। सरकार ने इस आवाज को गंभीरता से सुना, खदानें बंद हुईं तथा अरावली पुनर्जीवित होने लगी। लेकिन 2025 तक कई स्थानों पर अवैध खदानें फिर शुरू हो गईं। जहां खदानें चलीं, वहां अरावली नष्ट हुई, जल संकट तथा जलवायु संकट गहराया, भूजल भंडार खाली होते गए फरीदाबाद, नूह, गुरुग्राम इसके जीवंत उदाहरण हैं। राजस्थान, हरियाणा–दिल्ली, गुजरात में अब नए सिरे से लड़ाई तेज हो रही है। 7 दिसंबर 2025 के जयपुर सम्मेलन से "अरावली विरासत जल अभियान" फिर शुरू हो गया है।

अरावली कोई साधारण फिजियोग्राफी पहाड़ी नहीं है। भूगर्भीय विज्ञान की दृष्टि से यह प्राचीनतम काल की विविध पहाड़ियों की संपूर्ण श्रृंखला है, मनुष्य की उत्पत्ति से पूर्व का भूभाग, जो धीरे–धीरे समुद्र के गर्भ से जन्मा तथा ऊपर उठा। ऊंचा–नीचा भूभाग, जिसमें वन, ताल, झाल, झीलें, वन्यजीव, आवास, पहाड़ियां, पठार, मैदान सब शामिल हैं। इसे केवल ऊंचाई के आधार पर बांटना या नई अभियांत्रिकी–प्रौद्योगिकी के नाम पर कुछ लोगों की स्वार्थपूर्ति का शिकार बनाना अन्याय है।

अरावली भगवान का निर्मित अंग है, पंचमहाभूतों (भ–भगवान, ग–गगन, व–वायु, अ–अग्नि, न–नीर) से रचित। इसे विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का रंग चढ़ाकर लोगों को मूर्ख बनाना वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों दोनों के साथ शैक्षणिक अपराध है। न्यायपालिका, विधिपालिका तथा कार्यपालिका को अरावली की मूल परिभाषा बदलने का अधिकार नहीं है। भगवत अंगों को बदलना मानवीय कार्य नहीं। इनका कर्तव्य भगवान के कार्यों में सहयोग करना है, न कि उन्हें नष्ट करना। जो भगवान को नष्ट करने की कोशिश करता है, वह स्वयं नष्ट होता है।

न्यायालय की नई परिभाषा में अरावली को जीवंत भगवान का अंग न मानकर निर्जीव पत्थरों का ढेर मान लिया गया है। जबकि तरुण भारत संघ के मामले में न्यायालय ने इसे प्राकृतिक धरोहर तथा विरासत मानकर संरक्षित घोषित कराया था। वर्तमान निर्णय अरावली को न्याय नहीं करता। आगे चलकर शैक्षणिक संस्थानों में यही निर्णय पढ़ाया जाएगा, जो शैक्षणिक अपराध जैसा होगा। पूरी अरावली को एक ही भूगर्भीय परिभाषा में देखना चाहिए, न कि फिजियोग्राफी या भौतिक इकाई के रूप में। यह जीवित श्रृंखला भगवान द्वारा मानव तथा जीव जगत की जरूरतें पूरी करने हेतु बनाई गई है, लेकिन लालच की पूर्ति के लिए नहीं। वर्तमान निर्णय लालच से प्रेरित लगता है, इसलिए भगवान के विपरीत है। यदि उच्चतम न्यायालय पुनर्विचार करता है, तो यह भगवान का कार्य होगा। अरावली बचेगी तो भारत की रीढ़ मजबूत होगी, संस्कृति तथा प्रकृति दोनों का पोषण होगा।

15. अरावली विरासत जन अभियानः चार राज्यों के पर्यावरणविदों ने खनन रोकने और पर्यावरण संरक्षण पर उठाई आवाज़

जब अरावली सूखी और नग्न पड़ी थी, तब नदियाँ भी सूख गई थीं। इसी बेचैनी ने देशभर के लोगों को जयपुर के राजस्थान इंटरनेशनल सेंटर में "न्याय निर्माण मेला" के दौरान आयोजित "अरावली बचाओ सम्मेलन" में एक साथ ला खड़ा किया। सम्मेलन में बैठे हर व्यक्ति को यह बात याद थी, वह समय, जब अरवरी, रूपारेल, भागाणी, जहाजवाली और महेश्वरा जैसी नदियाँ अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही थीं। आज भी इस भय की परछाईं मौजूद है, क्योंकि खनन रुकने से जब ये नदियाँ पुनर्जीवित होकर दोबारा बहने लगी हैं, तो खनन दोबारा शुरू होने की आशंका ने बेचैनी बढ़ा दी है।

जल संरक्षक और जलपुरुष के नाम से विख्यात डॉ राजेंद्र सिंह ने सम्मेलन को निर्णायक मोड़ दे दिया। उन्होंने कहा, "माननीय उच्चतम न्यायालय ने अरावली का खनन बंद कराया था; अब अचानक ऐसा क्या हुआ कि वही उच्चतम न्यायालय अरावली पर्वतमाला में खनन की अनुमति देने जैसा निर्णय दे रहा है? इस पर उच्चतम न्यायालय को पुनः विचार करना चाहिए, ताकि भारत की विरासत बचे और भारत समृद्ध बने।" उन्होंने सबको याद कराया कि यहाँ की प्रकृति और संस्कृति के योग से ही हम विश्वगुरु बने।

सभी ने सबसे पहले अरावली आंदोलन को राष्ट्रीय अभियान बनाने पर सहमति जताई। अभियान का नाम "अरावली विरासत जन अभियान" रखने का सर्वसम्मति से प्रस्ताव पास हुआ और यह भी तय किया गया कि इसी अभियान का संचालन चारों राज्यों के कई साथी मिलकर करेंगे। अरावली के स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में शिक्षकों और विद्यार्थियों के साथ अरावली तथा वहाँ के लोगों के स्वास्थ्य संबंधी संवाद किए जाएंगे। अरावली को खनन मुक्त रखने की योजना बनाकर काम करेंगे। कारण स्पष्ट है अरावली की हरियाली ही चारों राज्यों की खाद्य सुरक्षा और जलवायु सुरक्षा में मदद करती है। यह बात सम्मेलन में सभी ने स्वीकार की और इसे सभी के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक बताया। हर वक्त यह स्मरण दिलाते हुए कि हम सब का स्वास्थ्य अरावली के स्वास्थ्य से जुड़ा है।

अरावली के केंद्र जयपुर में स्थित पद्मश्री लक्ष्मण सिंह ने इन बातों का समर्थन करते हुए कहा कि अरावली हमारी जीवनरेखा है और इसे बचाना हमारे लिए जरूरी है। उन्होंने प्रस्ताव रखा कि यदि हमारी सरकार और न्यायपालिका हमारी आवाज़ नहीं सुन रही हैं, तो अरावली के लिए पर्यावरण–यज्ञ करना होगा। उन्होंने खुलकर घोषणा की कि वह संपूर्ण समर्पित भाव से "अरावली विरासत जन अभियान" के साथ पुनः जुड़ गए हैं। उनके स्वर ने सम्मेलन की ऊर्जा और दृढ़ता दोनों को और मजबूत किया।

अहमदाबाद (गुजरात) से आई कुनिका नामक बहन ने बताया कि हमारे गुजरात में खनन के साथ–साथ पर्यटन बढ़ाने के नाम पर बहुत बड़ा विनाश हुआ है। वह बोलीं कि शामलाजी से लेकर हिम्मतनगर तक खनन के दुष्प्रभाव को समझाने के लिए विद्यालयों, कॉलेजों और महाविद्यालयों में अभियान चलाया जाएगा। स्मृति केडिया (उदयपुर) ने कहा कि अब उदयपुर क्षेत्र में अरावली की छोटी–छोटी पहाड़ियों को 6 करोड़ में खरीदकर वहाँ होटल बनाकर और खनन बढ़ाकर बड़ा नुकसान किया जा रहा है। कविता श्रीवास्तव ने कहा कि अरावली के बच्चे बड़े जन–संगठन और पर्वतों को बचाने में मदद कर सकते हैं। यहाँ के किसान संघठन खनन विरोधी है। वे भी इस अभियान के साथ है।

छत्तीसगढ़ के गौतम उपाध्याय की चिंता सम्मेलन में गहरी गूँज की तरह महसूस हुई। उन्होंने कहा कि अरावली के संबंध में उच्चतम न्यायालय के निर्णय से हम सभी चिंतित हैं। हमारे उड़ीसा, छत्तीसगढ़, झारखंड और महाराष्ट्र के सभी साथी चिंतित हैं कि जो निर्णय आया है वह खान माफिया के पक्ष में है और न्यायालय ने भी उन्हीं के पक्ष में निर्णय दिया है, जिससे हमारी पारिस्थितिकी और नदियाँ नष्ट हो जाएँगी तथा हमारी स्वास्थ्य–सुरक्षा दूभर हो जाएगी। एडवोकेट अमन ने भी यह बात दोहराई कि पर्वतों को बचाना बहुत जरूरी है; यदि इसे नहीं बचाया गया तो अरावली के आसपास का जीवन अस्त–व्यस्त हो जाएगा। यही समय है कि हम संविधान की रोशनी में पुनः उच्चतम न्यायालय जाएँ।

नीलम अहुवालिया ने साफ–साफ कहा कि यह लड़ाई कानूनी है और हम सब मिलकर कानूनी लड़ाई लड़ेंगे; अब यह केवल ई–मेल, व्हाट्सएप आदि डिजिटल माध्यमों तक सीमित नहीं रह सकती। अब हम पूरी अरावली में जन–अभियान चलाएंगे। गाँव से लेकर जिला, राज्य और देश स्तर पर अरावली के लिए चेतना–तंत्र खड़ा करेंगे। उच्चतम न्यायालय में भी जाएंगे और गाँवों में भी जागरूकता फैलाएंगे। अरावली को बचाना हम सबका कर्तव्य है।

जयपुर की उस शाम सम्मेलन खत्म हुआ, पर भावना नहीं, अरावली विरासत जन अभियान अब शुरू हो चुका है। उपस्थित लोगों के चेहरों पर थकान की जगह निर्णय की चमक थी, जैसे हर कोई दिल में एक ही वचन लेकर घर लौटा होः अरावली को बचाना है, क्योंकि जब अरावली सुरक्षित है, तभी हमारी नदियाँ, हमारा स्वास्थ्य और हमारा भविष्य सुरक्षित है।

रिर्पोट–ग्लोबल बिहारी

16. हिमालय–अरावली की पुकार गूंजी अटल जन्मशताब्दी में

कविता से जुटेगी जनता पर्वत रक्षा में

नयी दिल्लीः दिल्ली के एल.टी.जी. सभागार में ११ दिसंबर २०२५ की शाम विश्व पर्वत दिवस पर कुछ ऐसा हुआ जो दिल को छू गया। अटल बिहारी वाजपेयी की जन्मशताब्दी के अंतर्गत आयोजित 'भारत गौरवगाथा' और राष्ट्रीय कवि सम्मेलन में हिमालय तथा अरावली की रक्षा की पुकार गूंज उठी। वरिष्ठ नेता मुरली मनोहर जोशी की अध्यक्षता में शुरू हुए इस समारोह में उनकी आवाज में गहरी चिंता झलक रही थी। उन्होंने कवियों और साहित्यकारों से दिल से अपील कीकृअपनी कविताओं और रचनाओं में 'हिमालय है तो हम हैं' का भाव जगाओ, अरावली के दर्द को शब्द दो। इससे देश की जनता जागेगी, एकजुट होगी और इन महान पर्वत श्रृंखलाओं को फिर से हरा–भरा बनाने के लिए कंधे से कंधा मिलाकर खड़ी हो जाएगी।

अटल जी को याद करते हुए मन भावुक हो उठता है। वे दूसरों की बात को पूरे मन से सुनते थे, चाहे वह उनके विचारों से कितना भी विपरीत क्यों न हो। आज के नेताओं को उनसे सीखना चाहिए कि सिद्धांतों पर अडिग रहते हुए भी लोकतंत्र की आत्मा को कैसे जीया जाता है। २४ दलों की गठबंधन सरकार चलाकर उन्होंने साबित किया कि विरोधी विचारों को सम्मान देना ही सच्ची राजनीति की ताकत है। १६७२ से १६७७ के उस तूफानी दौर में युवा उनके ओजस्वी भाषणों से मंत्रमुग्ध हो जाते थेकृभारत का युवा उन्हें अपना आदर्श मानता था। आज उनकी जन्मशताब्दी पर युवाओं को समझना चाहिए कि अटल जी की सोच हिमालय जैसी ऊँची थी और सांस्कृतिक विरासत की रक्षा अरावली जैसी गहरी। वे भारत की आत्मा को पढ़ते थे, सद्भावना, समरसता और समभाव से लबरेज राजनेता तथा कूटनीतिज्ञ थे। जीवनभर उन्होंने प्रकृति और संस्कृति के पवित्र योग से एक गौरवशाली भारत की नींव रखी।

अटल जी भारतीय संस्कृति के अटल स्तंभ थे, विनम्रता की जीती–जागती मूर्ति। उनकी कथनी और करनी में कभी फर्क नहीं रहा। प्रधानमंत्री बनते ही नदी जोड़ का नारा दिया, लेकिन जब जल संरक्षण के अनुभव की बात सुनी तो तुरंत रुख बदला। अपने सहयोगी मंत्री सुरेश प्रभु को कहा, इनकी बात सुनो, समझो और उसी राह पर चलो। राजस्थान में स्थानीय लोगों के साथ जोहड़, चेकडैम, पोखर और तालाब बनवाकर नदियों से जुड़ाव करायाकृनतीजा यह कि नदियाँ खुद शुद्ध होकर सदानीरा बहने लगीं। अटल जी ने खुद लखनऊ बुलाकर घंटों चर्चा की। वे विरोधी मत को दुश्मनी नहीं मानते थे, निर्भीक होकर सुनते और जनहित में योजनाएँ बदल देते थे। वर्षाजल संरक्षण को सर्वोच्च प्राथमिकता देकर नदी जोड़ परियोजना का पूरा स्वरूप ही बदलवा दिया।

उनका कवित्व प्रधानमंत्री की व्यस्तता में भी फूट पड़ता था। सभी को साथ लेकर चलने की कला में वे अद्वितीय थे। सामुदायिक विकेन्द्रीकृत जल संरक्षण को बढ़ावा देकर वे सच्चे भारतरत्न बने। विरोध के बाद भी राष्ट्र को सर्वोपरि रखते हुए विरोधी की बात स्वीकार करते थे, क्योंकि मानवता उनके लिए सबसे ऊपर थी।

आज मुरली मनोहर जोशी ने अटल जी की लोकतांत्रिक समुद्र जैसी गहराई को फिर से उजागर किया और पूरे भारत को हिमालय व अरावली के पर्यावरणीय महत्व की याद दिलाई। अरावली वह प्राकृतिक ढाल है जो पश्चिम से आने वाली धूल भरी गर्म हवाओं को रोककर राजस्थान, हरियाणा, दिल्ली और पश्चिमी उत्तर प्रदेश सहित राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र को बचाती है। नए संकटों खनन, अतिक्रमण से उत्पन्न खतरे को देखते हुए इसे तत्काल बचाना होगा। अरावली बचेगा तो इन क्षेत्रों की उपजाऊ खेती, वन्यजीव, अभयारण्य, दुर्लभ औषधीय वनस्पतियाँ, प्राकृतिक संतुलन और सदियों की परंपराएँ भी जीवित रहेंगी। हिमालय और अरावली हमारी सांस्कृतिक व पर्यावरणीय धरोहर के जीते–जागते प्रतीक हैं। इनकी रक्षा के लिए समाज के हर तबके को आगे आना होगा, ताकि आने वाली पीढ़ियाँ भी इनकी छाँव में साँस ले सकें और इनकी महिमा को महसूस कर सकें।

17. पहाड़ बचाने का कानून अब जरूरी

अरावली फिर वैसी नहीं बन सकती है

हम सभी को यह समझना होगा कि खनन से नष्ट हुए पहाड़ कभी पुनर्जीवित नहीं हो सकते। 20 नवंबर 2025 का उच्चतम न्यायालय का निर्णय अरावली पहाड़ों को खनन की छूट देकर उन्हें स्थायी रूप से नष्ट कर देगा, और उन्हें पहले जैसी स्थिति में लौटाना असंभव होगा। हम नदियों और तालाबों को तो पुनर्जीवित कर सकते हैं, उन्हें पहले जैसा बना सकते हैं, लेकिन पहाड़ों को किसी भी तरह से वैसा ही पुनर्निर्माण करना प्रकृति की शक्ति से परे है। मानव की मशीनों से प्रकृति को इस तरह नष्ट करना अंततः स्वयं मानव जाति का विनाश ही है। अपनी आंखों के सामने इस महाविस्फोट को स्वीकार नहीं करना चाहिए।

अरावली के संरक्षण के लिए अभी तक कोई ठोस कानून नहीं बना है। अरावली पर उगने वाले जंगलों की रक्षा के लिए कानून तो बन गए, लेकिन मूल पहाड़ों को वैसा का वैसा बनाए रखने वाला कानून आज सबसे बड़ी जरूरत है। 7 मई 1992 में अरावली संरक्षण के लिए कानून बना था, लेकिन वह केवल अलवर–गुड़गांव क्षेत्र तक सीमित रह गया। बाद में पूरी अरावली के लिए उच्च और उच्चतम न्यायालय ने मजबूत निर्णय दिए थे। खनन माफिया इनके खिलाफ लगातार संघर्ष करते रहे और आखिरकार 20 नवंबर 2025 को अपनी मनमानी करा ली।

यदि ऐसा होता रहा तो यह ठीक वैसे ही होगा जैसे किसी अच्छे व्यक्ति की सुरक्षा की अनदेखी कर दी जाए। जंगलों को बचाना है तो सबसे पहले पहाड़ों को बचाना जरूरी है। पहाड़ों की रक्षा के लिए कानून अब उच्चतम न्यायालय ही बनवाएगा। अब तक न्यायपालिका ने वन्यजीव संरक्षण कानूनों का सहारा लेकर खनन रोका था, लेकिन अब पहाड़ों के लिए अलग कानून की आवश्यकता है। आज न्यायपालिका औद्योगिक दबाव में आकर संवेदनशील क्षेत्रों में भी खनन की अनुमति दे रही है, अरावली में यही हुआ है। सम्माननीय न्यायपालिका ने विभागों की शक्तियों के अनुरूप निर्णय लेकर अरावली पहाड़ों के लिए पहाड़–विरोधी परिभाषा दे दी है। यह काम राजनेताओं, अधिकारियों और उद्योगपतियों के गठजोड़ ने करवाया है।

हम इस परिभाषा को उचित नहीं मानते और हर जगह पहाड़ की आवाज बन रहे हैं, लेकिन सुनने वाले मौन हैं। न्यायपालिका ने जिन्हें जिम्मेदारी सौंपी है, वे पर्यावरण, जलवायु और वनों के रक्षक हैं, पहाड़ों के नहीं। इसलिए वे सभी प्रसन्न हैं। यहां तो 'बाढ़ ही खेत को खा रही है' वाली स्थिति है। पहले जंगल काटे जाएंगे, तो 20 नवंबर के निर्णय के आधार पर अधिकारी, नेता और व्यापारी का गठजोड़ पूरी तरह सुरक्षित रहेगा। ऐसे में वन और वन्यजीव संरक्षण कानून कुछ नहीं बचा पाएंगे। वन्यजीवों और पर्वतों को नष्ट करने वाले पोषित होते रहेंगे। अरावली के विनाश में 'चित्त भी मेरी, पट्ट भी मेरी, अंटा मेरे बाप का' वाली कहावत पूरी

तरह लागू हो जाएगी। अब सब कुछ जलवायु परिवर्तन और वन विभाग के हाथों में आ गया हैकृबचाने वाले को ही नष्ट करने का अधिकार दे दिया गया है।

इसलिए सम्माननीय उच्चतम न्यायालय को अपने निर्णय पर शीघ्र पुनर्विचार करके अपना सम्मान बढ़ाना चाहिए। हमें अपनी न्यायपालिका पर पूरा विश्वास है। उस विश्वास को बनाए रखने का अब उपयुक्त समय है, और हमें विश्वास है कि उच्चतम न्यायालय ऐसा जरूर करेगा। यदि ऐसा नहीं हुआ तो विश्व स्तर पर हमारी न्यायपालिका को आघात पहुंच सकता है। हम जानते हैं कि हमारी न्यायपालिका ने हमेशा विश्व में न्याय का गौरव बढ़ाया है। पुरातन विरासत अरावली को बचाने में भी वह ऐसा ही करेगी। हमारी संस्कृति और प्रकृति दोनों में अरावली निहित है। न्यायालय और सरकार मिलकर इसे जरूर बचाएंगी। सरकार ने विश्व स्तर पर अरावली रक्षा की घोषणाएं की हैं। अरावली बचाना सरकार की जिम्मेदारी और जनता का कर्तव्य है। लोकतंत्र में जन दबाव से ही सरकारी प्रयास शुरू होते हैं।

हम सभी अरावली बचाने के लिए अपना कर्तव्य मानकर एकजुट हो जाएं। पहाड़ों की रक्षा के लिए कानून बनवाएं। सबसे पहले उच्चतम न्यायालय में पुनर्विचार याचिका दायर करें। अरावली साक्षरता अभियान चलाएं, विद्यार्थियों, शिक्षकों और किसानों को चेतना यात्राओं से जोड़ें। भूगर्भ विशेषज्ञ आगे आएं और न्यायालय तथा सरकार को अरावली की सच्ची परिभाषा समझाएं। खनन स्थलों पर रामायण पाठ, पर्यावरण यज्ञ, सत्याग्रह, मार्च, धरना, उपवास जैसे अहिंसक तरीके अपनाएं। 'अरावली विरासत जन अभियान' को तेज करें। यह अभियान दलगत राजनीति से ऊपर है। कोई राजनीतिक दल इसे प्रभावित न करे, केवल सहयोग करें। सहयोग करने वाले सभी दलों का अभियान स्वागत और सम्मान करेगा।

यह अभियान सामूहिक नेतृत्व में सभी को बराबर अवसर देता है। इसे मजबूत बनाने के लिए सभी बराबर प्रयास करेंकृलेखन, सामाजिक कार्य, शिक्षण, परिसंवाद और श्रृंखला आयोजन से। प्रकृति प्रदत्त विरासत बचाते समय लाभ–हानि न देखें, केवल शुभ देखें। शुभ सभी के लिए समान हितकारी है। इसका अर्थ है सदैव नित्य प्राकृतिक नूतन निर्माण की प्रक्रिया, जहां कुछ भी नष्ट नहीं होता। प्रकृति और पहाड़ ही निरंतर निर्माण करते रहते हैं।

अरावली में खनन न होने से यह पर्वत श्रृंखला अन्न, जल, चारा, ईंधन और जलवायु सुरक्षा प्रदान करती रहेगी। खनन केवल कुछ लोगों के लाभ के लिए है, जो सभी के शुभ निर्माण को रोक देगा। यह पंचमहाभूतों की निर्माण शक्ति को नष्ट कर सकता है। इसलिए हम सभी भारतीय आस्था और पर्यावरण रक्षा के लिए एकजुट हो जाएं। यह भगवान का काम है। इसकी अनदेखी सृष्टि और जीवन को चुनौतियां देगी। अगली पीढ़ी हमें क्षमा नहीं करेगीकृवे कहेंगी कि पुरखों से मिले पहाड़ और पानी आपने हमारे लिए नहीं बचाए, अपनी आंखों के सामने सब नष्ट करा दिया।

हमारी कहावत है कि जैसा मिला, वैसा ही अगली पीढ़ी को सौंपकर मोक्ष की ओर जाना चाहिए। पुरखों की विरासत नष्ट होते देख चुप रहना पाप है। अरावली विरासत जन अभियान शुभ के लिए है, खनन लाभ के लिए। शुभ सनातन है, लाभ क्षणिक। इस चिंता को छोड़ शुभ कार्य में सभी को जोड़ें। अपनी रुचि, क्षमता और दक्षता के अनुसार इसमें योगदान दें। यदि अब नहीं किया तो अगली पीढ़ियां हमें माफ नहीं करेंगी।

80–90 के दशक में भी अरावली की बेटे–बेटियों ने इसे बचाया था। अब फिर एकजुट होकर बचाएं। सभी अपनी योग्यता से आज से ही लग जाएं। अरावली हमारी विरासत है, इसे बचाना कर्तव्य। खनन के बाद अरावली पहले जैसी नहीं बन सकती। यह भारत की विरासत है, इसे वैसा ही बनाए रखें। अरावली के बेटे–बेटियां संगठित होकर इसे नष्ट न होने दें। विरासत बचाना हमारा और राज्य का संवैधानिक कर्तव्य व अधिकार है। संविधान प्रदत्त शक्तियों से उच्चतम न्यायालय से प्रार्थना है कि निर्णय पर पुनर्विचार कर भारत की पुरातन विरासत अरावली को बचाएं।

नोट– इस पुस्तक के अलेख कोई भी प्रकाशित कर सकता है। इससे संबंधित जानकारी के लिए संपर्क कर सकते है (पारस प्रताप सिंह 9009739338)